Class:	**B.A. 2nd year**	**Subject:**	**Music (Vocal/Instrumental)**
Course Type:	**DSC**	**Course Code:**	**MUSA201TH**
Course Name:	**Theroy**	**Paper Type:**	**Theory Paper III**

MUSIC
(Theory)

Lesson : 1 - 9

Dr.Nirmal Singh

Centre for Distance & Online Education (CDOE)
Himachal Pradesh University
Gyan Path, Summer Hill, Shimla-171005

विषय सूची

क्रम	इकाई	विषय सूची	पृ. सं
1		विषय सूची	2
2		प्राक्कथन	3
3		पाठ्यक्रम	4
4	इकाई 1	गत, तराना, मेलडी और हार्मनी	5-15
5	इकाई 2	पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव	16-26
6	इकाई 3	मीन्ड, खटका, सूत-घसीट, कण और कृंतन	27-36
7	इकाई 4	राग मारू विहाग, राग मालकौंस और राग वृंदवानी सारंग	37-47
8	इकाई 5	ख्याल और ध्रुपद	48-61
9	इकाई 6	शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत	62-71
10	इकाई 7	नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर	72-88
11	इकाई 8	भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन परिचय	89-104
12	इकाई 9	ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना	105-114
13		महत्त्वपूर्ण प्रश्न- कार्यभार	115

प्राक्कथन

संगीत स्नातक के नवीन पाठ्यक्रम के क्रियात्मक विषय के MUSA 201TH में संगीत से सम्बन्धित उपयोगी सामग्री का समावेश किया गया है। संगीत में प्रायोगिक तथा सैद्धान्तिक दोनों पक्षों का योगदान रहता है। गायन तथा वादन में भी इन्हीं दोनों पक्षों का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। प्रस्तुत पाठ्यक्रम में संगीत की सैद्धान्तिक परीक्षा को ध्यान में रखकर पाठ्य सामग्री दी गई है। इस पुस्तक के

इकाई । में गत, तराना, मेलडी और हार्मनी आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 2 में पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 3 में मीन्ड, खटका, सूत-घसीट, कण और कृंतन आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 4 में राग मारू विहाग, राग मालकौंस और राग वृंदवानी सारंग आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 5 में ख्याल और ध्रुपद आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 6 में शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 7 में नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 8 में भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन विषय का वर्णन किया गया है।

इकाई 9 में ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना का वर्णन किया गया है।

प्रत्येक इकाई में शब्दावली, स्वयं जांच अभ्यास प्रश्न तथा उत्तर, संदर्भ, अनुशंसित पठन, पाठगत प्रश्न दिए गए हैं।

प्रस्तुत पाठ्यक्रम को लिखने के लिए स्वयं के अनुभव से, संगीतज्ञों के साक्षात्कार से तथा संगीत से सम्बन्धित पुस्तकों द्वारा शिक्षण सामग्री एकत्रित की गई है। मैं उन सभी संगीतज्ञों तथा लेखकों का आभारी हूं जिनके ज्ञान द्वारा तथा जिनकी संगीत संबंधी पुस्तकों द्वारा शिक्षण सामग्री को यहां लिया गया है। आशा है कि विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक लाभप्रद होगी।

COURSE CODE MUSA201TH
B.A.2nd Year

HINDUSTANI MUSIC (Vocal & Instrumental)

3 Lectures /week

Duration	Paper-III Theory (Unit-I)	Max Marks	Credits
3 hours.		50(35+15Assesment)	3

Title- Theory of Indian Music, Ancient Granthas & Contribution of musicologists.

There will be three sections, candidates shall have to answer one question from each section & two from any of the three sections thus five questions in all.

SECTION-I

Genaral discussion and definition of the following:-

a. Khyãl, MaseetKhani – Razakhani gat, Dhrupad, Tarana, Meend, Soot, Murki, Kan, Khatka, Krintan, Harmony, Melody

b. Comparative study of Bhatkhande&VishnudigamberPaddhati (Notation System)

c. Writing of Tãlas& Compositions in Notation

d. Detailed study of Rãgas (Rãga-Maru-Bihag, Malkauns, Vrindavani Sarang) &Tãlas prescribed in syllabus and comparative study of Rãgas with the Rãgas of the previous semester

e. Essay, ShastriyaSangeet(Classical Music) &SugamSangeet(Light Music)

SECTION-II

a. General study of following granthsNatyashastra, SangeetRatnakar, Vrihdeshi

SECTION-III

Life & Contribution of the following:-

Pt. V. D. Paluskar, Swami Tyagraja, Pt.Sharangdev

इकाई 1
गत, तराना, मेलडी और हार्मनी

इकाई की रूपरेखा

1.1	भूमिका
1.2	उद्देश्य
1.3	गत परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
1.4	तराना परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
1.5	हार्मनी और मेलडी परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 3
1.6	सारांश
1.7	शब्दावली
1.8	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.9	संदर्भ
1.10	अनुशंसित पठन
1.11	पाठगत प्रश्न

1.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह पहली इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में गत, तराना, मेलोडी और हार्मनी का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए अलंकारों का अभ्यास किया जाता है। जिस तरह गायन मे राग मे बंदिश गाई जाती है उसी प्रकार वादन मे गत बजाई जाती है। शास्त्रीय गायन मे राग प्रदर्शन के बाद अंत मे तराना गायन प्रस्तुत किया जाता है। संगीत मे जब गीत को यथावत वाद्य पर बजाय जाता है उसे मेलोडी कहते हैं, साथ ही जब उसी गाने को यथावत न बजाकर उस गाने से संबंधित 3-4 स्वरों का कॉर्ड बनाकर बजाय जाता है तो उसे हार्मनी कहते हैं, जो सुनने मे बहुत ही आनंददायक प्रतीत होता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी गत, तराना, मेलोडी और हार्मनी विषय का अर्थ परिभाषा और अलंकारों के प्रकार और रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर अलंकारों के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात स्वयं अलंकार बनाने मे समर्थ हो सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- गत विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- तराना का अर्थ समझ सकेंगे।
- हार्मनी और मेलडी का अर्थ समझ सकेंगे।
- सितार वाद्य या गायन मे इस विधाओं का अभ्यास कर पाएंगे, जिससे उनके गायन और वादन मे निखार आएगा।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल गत, तराना, मेलडी और हार्मनी के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

1.3 गत परिचय

राग के वादी, संवादी एंव राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों के आधार पर सितार के बोलों की तालबद्ध रचना को 'गत' कहते हैं। साधारण रूप में गत के दो भाग होते हैं- स्थायी तथा अंतरा। परंतु कई गतों में स्थायी तथा अंतरा के मध्य एक या दो पंक्तियाँ रहती है इन्हें अर्थात् 'मंझा' कहा जाता है। वास्तव में यह स्थाई का ही एक भाग होता है, पर कुछ संगीतज्ञ इसे अलग नाम दे देते है। गत मुख्य रूप से दो प्रकार की होती है:-

1) मसीतखानी गत- उस्ताद मसीत खाँ ने सितार वादन में एक नई शैली का विकास किया, जिसे मसीतखानी शैली कहते हैं। इस शैली की गत में मिजराब के निश्चित बोलों का प्रयोग किया जाता है। यह बोल इस प्रकार है- दिर दा दिर दा रा दा दा रा। यह बोल आठ मात्रा के हैं तथा इन्हीं को दो बार बजाकर 16 मात्राएं पूरी की जाती हैं। हैं। इन गतों का प्रारम्भ 12वीं मात्रा से किया जाता है तथा यह तीन ताल में होती है। यह गतें विलम्बित लय में बजाई जाती हैं।

(2) रज़ाखानी गत- गुलाम रजा ने ख्याल गायकी के तराना आदि के आधार पर मध्य तथा द्रुत लय की गतें बनाई। इस गत की शैली को रजाखानी गत कहा जाने लगा। अधिकतर गत के बोल दा दिर दिर दिर दा दिर दा रा, दा रा दिर दिर दाऽ रदा ऽर दाऽ थे लेकिन इन गतों में मिजराब के बोल निश्चित नहीं होते तथा इनको प्रारम्भ करने का कोई निश्चित स्थान नहीं होता है। तो परिणाम स्वरूप यद्यपि रज़ा खाँ द्वारा बनाई गई गत का आज पता नहीं चलता फिर भी प्रत्येक मध्य तथा द्रुत लय की गत को रज़ाखानी गत कहा जाने लगा है। उदाहरण के लिए नीचे विलंबित गत और उसके बोल दिए गये हैं-

राग बागेश्री विलंबित गत रचना तीन ताल

स्थायी															
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
											मम	ग॒	रेरे	सा	ध़नि॒
											दिर	दा	दिर	दा	दिर
सा	सा	सा	म	ग॒	मम	नि॒	ध	म	ग॒रे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	रा	दा	रा	दा	दिर	दा					
अंतरा															
											मम	ग॒	मम	ध	नि॒
											दिर	दा	दिर	दा	रा
सां	सां	सां	सांसां	नि॒	सांसां	रें	सां	ध	नि॒	ध					
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा					
											मंमं	गं॒	रेंरें	सां	सां
											दिर	दा	दिर	दा	रा
रें	सां	सां	धनि॒	ध	मम	प	ध	ग॒	रे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा					
X				2				0				3			

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

1.1 राग के वादी, संवादी एंव राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों के आधार पर सितार के बोलों की तालबद्ध रचना को क्या कहते हैं।

1) झाला

2) गत

3) तोड़े

4) तराना

1.2 दिर दा दिर दा रा दा दा रा कौन सी गत के बोल हैं?

1) रजाखानी गत

2) द्रुत गत

3) मसीतखानी गत

4) कोई नहीं

1.3 दा दिर दिर दिर दा दिर दा रा, दा रा दिर दिर दाऽ रदा ऽर दाऽ कौन सी गत के बोल हैं?

1) विलंबित गत

2) रजाखानी गत

3) मसीतखानी गत

4) कोई नहीं

1.4 रजाखानी गत के आविष्कारक कौन थे?

1) अब्दुल रसूल खाँ

2) गुलाम मुस्तफा खाँ

3) नूर अहमद

4) रजा खान

1.5 मसीतखाँनी गत के आविष्कारक कौन थे?

1) अचपल खाँ

2) मियां शोरी

3) मसीतखाँन

4) जहांगीर

1.4 तराना

यह भी गायकी का एक प्रकार है। इस शैली में गीत के ऐसे शब्द होते हैं, जिनका कोई अर्थ नहीं होते है। जैसे, ना, ते, दा, देन, आदि। इसके दो भाग होते हैं स्थाई तथा अंतरा। तराने में तानों का प्रयोग किया जाता है तथा इसे केवल दुत लग में ही गाया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि ये बिना अर्थ वाले अक्षर अरबी भाषा के बीज मंत्र है जिनका प्रयोग अल्लाह की उपासना के लिए किया जाता है। तराना गीतों को तीन ताल में अधिकतर गाया जाता है। इसमें लय बढती जाती है, इसे अधिकतर छोटे ख्याल के बाद गाया जाता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

1.6 तराना एक शैली है?

1) गायन शैली

2) वादन शैली

3) दोनों

4) कोई नहीं

1.7 तराना के दो भाग होते हैं?

1) संचारी और आभोग

2) ध्रुव और मेलापक

3) स्थायी और अंतरा

4) शुद्धा और भिन्ना

1.8 अधिकतर तराना कौन से ताल मे गाया जाता है?

1) चार ताल

2) एकताल

3) दादरा

4) तीनताल

1.9 तराना कौन सी लय मे गाया जाता है?

1) मध्य

2) द्रुत

3) अति विलंबित

4) कोई नहीं

1.5 हारमॉनी और मैलॉडी

संगीत के विद्यार्थी प्रायः विचार किया करते हैं कि भारतीय और पाश्चात्य संगीत में कौन अधिक उत्तम है! यह बहुत दिनों से कहा जाता है कि भारतीय संगीत का आधार मैलॉडी (Melody) है और पाश्चात्य संगीत का हारमनी (Harmony) है। कुछ विद्वानों का मत है कि हारमनी, मैलॉडी का ही सुघरा हुआ रूप है। कुछ भी हो, यह कहना कठिन है कि दोनों में कौन अधिक उत्तम है। लेकिन यह सत्य है कि दोनों के कार्य पृथक् पृथक् हैं।

जब एक-एक स्वर को इस प्रकार रखा जाए कि स्वर-रचना चित्ताकर्षक बन जाए तो उसे मैलॉडी कहेंगे। परन्तु जब कम-से-कम दो अथवा दो से अधिक स्वरों को साथ-साथ बजाकर रचना की जाए तो उसे एक प्रकार से 'हारमॉनी' कह सकते हैं। जब हम किन्हीं दो अथवा दो से अधिक स्वरों को एकदम साथ- साथ वजाएँ तो जो सब स्वरों की सम्मिलित ध्वनि उत्पन्न होगी, उसे कॉर्ड (Chord) कहते हैं। जब इन्हीं कॉड्स का मिश्रण धुनों के साथ लगातार बजाया जाए तो जो ध्वनि उत्पन्न होगी, उसे 'हारमॉनी' कहेंगे। इसे अधिक स्पष्ट यों कहा जा सकता है कि मैलॉडी की रचना में एक-के-वाद-एक स्वर का प्रयोग किया जाता है, जबकि हारमॉनी में स्वर के स्थान पर एक-के-बाद-एक स्वर-कार्ड बजाई जाती हैं। दूसरा उदाहरण स्वरों के आधार पर इस प्रकार दिया जा सकता है कि 'गपनि सां' में हम जब स्वरों को एक-के-बाद-एक बजाते हैं तो इसे मैलॉडी कहेंगे। अब यदि जितने काल में हमने एक स्वर 'ग' बजाया है, उतने ही काल में हम तीन स्वरों 'सा ग प' को एकसाथ दबाकर बजा दें [चूंकि इन तीनों स्वरों को एकसाथ बजाना है, तो यही हमारी एक कॉर्ड होगी। जब हम चार कॉर्डस की एक कल्पित रचना को किसी धुन के साथ उतने ही काल में बजा दें, जितने काल में कि चार स्वरों की धुन 'ग प नि सां' को बजाया है (अर्थात् एक कॉर्ड या तीन स्वरों को एकसाथ दवाकर एक स्वर के काल में

बजाएँ, इस प्रकार चार कॉर्डस को चार स्वरों के काल में बजा दें); जैसे-म नि नि तो इस प्रकार से जो ध्वनि उत्पन्न होगी; उसे सा सा ग प 'हारमॉनी' कहेंगे।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

1.10 जब एक-एक स्वर को इस प्रकार रखा जाए कि स्वर-रचना चित्ताकर्षक बन जाए तो उसे क्या कहेंगे।

1) हार्मनी

2) मैलॉडी

3) सप्तक

4) कोई नहीं

1.11 जब कम-से-कम दो अथवा दो से अधिक स्वरों को साथ-साथ बजाकर रचना की जाए तो उसे कहते हैं।

1) नाद

2) आवृति

3) शुद्ध सप्तक

4) हारमॉनी'

1.6 सारांश

गत, तराना, मेलडी और हार्मनी भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अलंकारों के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे अलंकार अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

1.7 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

1.8 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

1.1 उत्तर: 2

1.2 उत्तर: 3

1.3 उत्तर: 2

1.4 उत्तर: 4

1.5 उत्तर: 3

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

1.6 उत्तर: 1

1.7 उत्तर: 3

1.8 उत्तर: 4

1.9 उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 3

1.10 उत्तर: 2

1.11 उत्तर: 4

1.9 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

1.10 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

1.11 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. गत का परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. . तराना का परिचय लिखिए।

प्रश्न 3. . हार्मनी और मेलोडी का परिचय लिखिए।

प्रश्न 4. गत और तराना का अर्थ विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 5. गत और मेलोडी और हार्मनी का अर्थ विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 6. तराना और मेलोडी और हार्मनी का अर्थ विस्तार सहित वर्णन करें।

इकाई-2
पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव

इकाई की रूपरेखा

2.1	भूमिका
2.2	उद्देश्य
2.3	पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जीवन परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
2.4	स्व० प० शाङ्गदेव जीवन परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
2.5	सारांश
2.6	शब्दावली
2.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8	संदर्भ
2.9	अनुशंसित पठन
2.10	पाठगत प्रश्न

2.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह दूसरी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव का जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

संसार की कोई भी विधा/संगीत क्यों न हो, जाब तक उसका इतिहास न जाना जाए, उस संगीत को जड़ से जानना असंभव सा प्रतीत होता है। इसी प्रकार संगीत की बारीकियों को समझने के लिए संगीत से जुड़े उन महान संगीतज्ञों के बारे मे अध्ययन करना बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है, जिन्होंने अपना सर्वस्व संगीत के लिए न्योछावर कर दिया। उन महान संगीत गुनीजनों के जीवन का गूढ़ता से अध्ययन किया जाता है और उनके समय मे संगीत की स्थिति का और उनके द्वारा किए गए संगीत के उत्थान का अध्ययन किया जाता है। इन गुनीजनों के द्वारा रचित रचनाओं लेखों और रागों के अध्ययन से संगीत विषय मे निपुणता प्राप्त की जा सकती है। उन्हीं महान संगीतज्ञों मे से पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव भी हैं। इनके जीवन का अध्ययन किसी भी संगीतज्ञ के लिए बहुत आवश्यक है। इनके जीवन परिचय से, इनके संगीत के प्रति समर्पण से कोई भी प्रेरित हुए बिना नहीं रह सकता अर्थात अनायास कि प्रेरित हो जाता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव के जीवन परिचय का विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे और इनके द्वारा सांगीतिक योगदान का अध्ययन कर प्रेरणा पा सकते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव के सांगीतिक यात्रा को जान पाएंगे।
- पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के संगीत के प्रति निःस्वार्थ प्रेम और जनून को जान पाएंगे।
- पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के सांगीतिक योगदान को जान पाएंगे।

- पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के सांगीतिक योगदान के साथ साथ इनके शिष्यों और इनकी उपलब्धियों को जान पाएंगे।
- स्व० प० शाङ्गदेव के सांगीतिक यात्रा को जान पाएंगे ।
- स्व० प० शाङ्गदेव के संगीत के प्रति निःस्वार्थ प्रेम और जनून को जान पाएंगे।
- स्व० प० शाङ्गदेव के सांगीतिक योगदान को जान पाएंगे।
- स्व० प० शाङ्गदेव के सांगीतिक योगदान के साथ साथ इनके शिष्यों और इनकी उपलब्धियों को जान पाएंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल उस्ताद विलायत खाँ और पंडित निखिल बैनर्जी के जीवन परिचय का अध्ययन कर परएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन और सांगीतिक यात्रा मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

2.3 पं० विष्णु दिगंबर पलुस्कर

आधुनिक समय में जितना भी संगीत का प्रचार है, इसका मुख्य श्रेय स्व० पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर को प्राप्त होता है। आपने सङ्गीत के प्रचार में आना सारा जीवन अर्पण कर दिया। आप का जन्म सन् 1872 के 10 अगस्त (श्रावण पूर्णिमा) को कुरूंदवाड़ रियासत के बेलगांव नामक ग्राम में हुआ। पिता का नाम दिगम्बर गोपाल और माता का नाम गंगा देबी था। पिता जी एक अच्छे कीर्तनकार थे। उन्होंने पंडित जी को अंग्रेजी शिक्षा दिलानी शुरू किया। बाल्या-वस्था में दीपावली के दिन आतिशबाजी से विष्णु के आंखों की ज्योति क्षीण हो गई। फलस्वरूप उनकी पढ़ाई बंद हो गई। आँख के बिना कोई उचित धंधा न मिलने के कारण विवश होकर आपके पिता ने आपको संगीत सिखाने का सोचा। उन्हें मिरज के पं० बालकृष्ण बुआ इचलकरजीकर के पास सङ्गीत-शिक्षा के लिये भेज दिया। मिरज रियासत के तत्कालीन महाराजा ने उनको राजाश्रय दे दिया और उनके लिये प्रत्येक प्रकार की व्यवस्था कर दी।

एक बार मिरज में एक सार्वजनिक सभा आयोजित की गई और रियासत के सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों को निमन्त्रित किया गया। विष्णु दिगम्बर जी को बुलाया गया किन्तु उनके गुरू जी को निमंत्रित नहीं किया। पं० जी ने इसका कारण जानना चाहा। पूछने पर उन्हें आश्चर्यजनक उत्तर मिला कि अरे ! वे तो गवैये हैं। उन्हें निमन्त्रित करने की क्या आवश्यकता ? अपने पूज्य गुरू और गवैयों के विषय में कहे गये ये वाक्य उनके हदय में घुस गये। उन्होंने उसी क्षण संगीतजों की दशा सुधारने, समाज में संगीत को उच्च स्थान दिलाने तथा संगीत का प्रचार करने का दृढ़ संकल किया।

सन् १८६६ में राजाश्रय के सभी सुखों को छोड़कर अपने उद्देश्यो की पूति लिये भ्रमण के लिये निकल पड़े। सर्व प्रथम वे सतारा गये। वहाँ उनका स्वागत हुआ और उनका गायन कार्यक्रम बहुत सफल रहा। इस प्रकार वहाँ के लोगों में सङ्गीत और सङ्गीतज्ञों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न किया। इसके बाद वे उत्तर प्रदेश, बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र तथा बम्बई प्रान्तों के मुख्य मुख्य नगरों में गये। जहां भी गये अपने गायन से लोगों को मोहित किया और उनमें संगीत सीखन की भावना उत्पन्न की।

जनता में संगीत के प्रचारार्थ विष्णु दिगम्बर जी ने यह सोचा कि सर्वप्रथम गीत के व गार रस के भद्द शब्दों को निकाल कर भक्ति रस के सुन्दर शब्दों को रक्खा जाय और संगीत के कुछ विद्यालय स्थापित किये जाँय, जहाँ संगीत की शिक्षा दी जा सके। उन्होंने बहुत से गीत के शब्दों में परिवर्तन किया और ५ मई सन् १६०१ को लाहौर में एक संगीत संस्था, 'गांधर्व महाविद्यालय' की स्थापना की। संस्था को ठीक प्रकार से चलाने के लिये उन्हें बीच-बीच में आर्थिक सकटों का सामना करना पड़ा। प्रारम्भ में कई दिनों तक विद्यालय में कोई व्यक्ति प्रवेश के लिये नहीं गया, किन्तु पडित जी निराश नहीं हुये। स्कूल के समय वे स्वयं तानपुरा लेकर अभ्यास करते। कुछ दिनों के बाद विद्यार्थियों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ती गई। उसी बीच उन्हें अपने पिता की मृत्यु का दुखद समाचार प्राप्त हुआ, किन्तु वे विद्यालय के कार्यों में इतन व्यस्त रहे कि ऐसे समय पर भी घर नहीं जा सके।

सन् १६०८ में पंडित जी ने बम्बई में गांधर्व महाविद्यालय की एक शाखा खोली। वहाँ पर उन्हें लाहौर की तुलना में अधिक सफलता मिली तथा विद्याषियों को संख्या बहुत काफी बढ़ गई। लगभग पन्द्रह वर्षों तक विद्यालय का कार्य सुचारु रूप से चलता रहा। निजी भवन लेने में क्यिालय को काफी कर्ज लेना पड़ा। कुछ समय तक वह त्रऋण अदा नहीं किया जा सका। फलस्वरूप भवन ऋण में चला गया और विद्यालय बन्द हो गया। इससे वे बहुत निराश हुये और उनमें

इस संसार से विरक्त की भावना जाग्रत हुई। वे गेरुआ वस्त्र पहनने लगे और हर समय 'रघुपति राघव राजाराम... कहने लगे। इसके बाद उन्होने नासिक में 'राम नाम आश्रम' की स्थापना की।

वैदिक काल में प्रचलित आश्रम प्रणाली के आधार पर पलुस्कर जी ने लगभग सौ शिष्यों को तैयार किया। उनके अधिकांश शिष्य उनके पक्ष साथ रहते थे। उनके खाने-पीने, रहने तथा शिक्षा का प्रबन्ध वे स्वयं निःशुल्क करते। उनके शिष्यों में वी० ए० कशालकर, ओमकार नाथ ठाकुर, बी० आर० देवधर, वी० एन० ठकार, वी० एन० पटवधन, नारायण राव व्यास आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उन्होंने एक नई स्वरलिपि पद्धति की रचना की जो उनके नाम से सम्बद्ध है। उन्होंने लगभग पच्चास पुस्तकें लिखीं, जिनके नाम हैं- सगीत बाल प्रकाश, बाल बोध, बास भागों मे राग प्रवेश, सगीत शिक्षक, राष्ट्रीय संगीत, महिला सगीत आदि। 'सगीतामृत प्रवाह' नामक मासिक पत्रिका भी कुछ समय तक निकालते रहे। सन् १६३० में उन्हें लकवा मार गया फिर भी अपना कार्य-क्षमता के अनुकूल सगीत-सेवा करते रहे। अत में 21 अगस्त सन् 1931 को उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। उनके बारह पुत्र हुये जिनमें से ग्यारह पुत्र की मृत्यु बाल्यावस्था में ही हो गई। पंडित जी के केवल एक पुत्र दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर अपने जीवन के ३५ वर्षों तक संगोत की सेवा करते रहे, किन्तु ईश्वर की विडम्बना कौन जाने। सन् १६५५ की विजयादशमी को उनका भी देहावसान हो गया। पंडित जी के अनेक शिष्य इस समय सारे उत्तरी हिन्दुस्तान में सगीत का प्रचार कर रहे हैं और उनके द्वारा स्थापित संस्था 'गांधर्व महा- विद्यालय' संगीत की अकथ सेवा कर रही है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

2.1 पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जन्म कब हुआ?

1) 10 अगस्त 1875

2) 10 अगस्त 1872

3) 10 जून1872

4) 10 दिसम्बर 1872

2.2 पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के पिता का नाम क्या था?

1) दिगम्बर गोपाल

2) नायक बक्श

3) मियां शोरी

4) अन्य

2.3 पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर की माता का नाम क्या था?

1) माया देवी

2) गिरिजा देवी

3) गंगी देवी

4) सिद्धेश्वरी देवी

2.4 पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा खोले गए संगीत महाविद्यालय का नाम क्या था?

1) आर्य महाविद्यालय

2) 'गांधर्व महाविद्यालय

3) संगीत महाविद्यालय

4) नाद महाविद्यालय

2.5 पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का देहांत कब हुआ?

1) 21 अगस्त सन् 1937

2) 21 मई सन् 1931

2) 21 अगस्त सन् 1933

4) 21 अगस्त सन् 1931

2.4 शारंग देव

पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव की अमर कृति 'संगीत रत्नाकर' से सभी संगीत-जिज्ञासु परिचित हैं। उसने अपने पहले के सभी ग्रन्थों का सार इस पुस्तक में संकलित किया है। इसलिए किसी भी प्राचीन सदर्भ के लिय इसी ग्रन्थ का आवश्यकता होती है। सिंहभूपाल, केशव एवम् कल्लि- नाथ ने संस्कृत में एवम् बिट्ठल ने तेलगू

भाषा में इस पर टीका लिखी। यह ग्रन्थ मुख्य सात अध्यायों में विभक्त है - स्वराध्याय, रागाध्याय, प्रकीर्दाध्याय, तालाध्याय एवम् नृत्याध्याय। प्रत्येक इकाई के अन्त- गंत पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या औरं अन्य आवश्यक सामग्री दी गई है। सगीत के सभी तत्वों पर प्रकाश डालने से उसकी सर्वांग विद्वता का परिचय मिलता है। भरत के समान उसने 'सारणो चतुष्टयी' नामक प्रयोग का सम्पादन तो किया, किन्तु उसने उसके समान स्वर व.णा पर नहीं बल्कि श्रुति वीणा पर प्रयोग किया। शारगदेव ने गधार ग्राम का विस्तृत वर्णन किया है जो उस समय लुप्त प्राय सा हो रहा था। उसने सभी रागों को दस वर्गों में बाँटा जो 'दस विधि राग वर्गीकरण के नाम से प्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ दोनों सगीत पद्धतियों का आधार ग्रन्थ माना जाता है। इसको रचना तेरह्वों शताब्दों में माना जाती है। सूत्र शैली में लिखे जाने के कारण कुछ स्थानों को समझना मुश्किल हो गया है और एक के अनेक अर्थ लगाये जाने लगे हैं।

शाङ्ग देव के जन्म-काल के विषय में विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश विद्वान इनका जन्म तेरहवीं शताब्दी का पूर्वार्ध मानते है। इनके पूर्वज कश्मार के निवासी थे जो कुछ कारणवश दक्षिण भारत में जा कर बस गये थे। शाङ्ग देव के पिता शोडल, दौलताबाद के तत्कालीन नरेश के यहाँ नियुक्त थे। शारगदेव प्रतिभावान व्यक्ति होने के कारण उन्हें भी राजाश्रय प्राप्त हो गया। उनकी मृत्यु तेरहवी शताब्दी के उत्तरार्ध में हुई।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

2.6 पंडित शारंगदेव की कृति का नाम क्या है?

1 संगीतांजली

2 राग परिचय

3 संगीत रत्नाकर

4 संगीत पारिजात

2.7 संगीत रत्नाकर ग्रंथ मे कितने अध्याय है?

1 सात

2 दो

3 पाँच

4 अन्य

2.8 संगीत रत्नाकर ग्रंथ का संस्कृत भाषा मे टीका इनमे से किसने किया था?

1 व्यंकटमखी

2 सिंह भूपाल

3 तानसेन

4 कोई नहीं

2.9 संगीत रत्नाकर ग्रंथ का तेलगु भाषा मे टीका इनमे से किसने किया था?

1 व्यंकटमखी

2 बिठल

3 तानसेन

4 कोई नहीं

2.10 दस विध राग वर्गीकरण किसकी दें है?

1 शारंगदेव

2 स्वामी त्यागराज

3 विलकल्प एक और दो

4 अन्य

2.5 सारांश

पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और स्व० प० शाङ्गदेव भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इनके जीवन परिचय के अध्ययन से इनके द्वारा रचित रचनाओं और कृतियों को समझने और जानने का अवसर मिलता है, जो किसी भी संगीत रसिक के सांगीतिक जीवन के लिए सोने पर सुहागे वाली बात हो जाती है। इनके जीवन परिचय के अध्ययन से शास्त्रीय संगीत के क्रियात्मक और

रचनात्मक पक्ष मे मजबूती, तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे संगीतज्ञ के गायन वादन और सांगीतिक सफर मे प्रेरणा, रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

2.6 शब्दावली

- पद्मश्री (Padamshree): देश के सर्वोच्च परुस्कारों मे से एक।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

- सितार (Sitar): भारतीय शास्त्रीय संगीत का ऐसा तंत्री वाद्य यंत्र जो आज किसी भी परिचय का मोहताज नहीं रह गया है।

2.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

2.1 उत्तर: 2

2.2 उत्तर: 1

2.3 उत्तर: 3

2.4 उत्तर: 2

2.5 उत्तर: 4

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

2.6 उत्तर: 3

2.7 उत्तर: 1

2.8 उत्तर: 2

2.9 उत्तर: 2

2.10 उत्तर: 1

2.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

2.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

2.10 पाठगत प्रश्न
पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर

प्रश्न 1. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का संक्षिप्त जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्रश्न पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जीवन परिचय और इनकी सांगीतिक उपलब्धियों पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 4. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा रचित रचनाओं का विस्तार सहित वर्णन करें।

पंडित जयदेव

प्रश्न 1. स्व० प० शाङ्गदेव का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. स्व० प० शाङ्गदेव का संक्षिप्त जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्रश्न 3 स्व० प० शाङ्गदेव का जीवन परिचय और इनकी सांगीतिक उपलब्धियों पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 4. स्व० प० शाङ्गदेव द्वारा रचित रचनाओं एवं कृतियों का विस्तार सहित वर्णन करें।

इकाई-3
मीन्ड, खटका, सूत-घसीट, कण और कृंतन

इकाई की रूपरेखा

3.1	भूमिका
3.2	उद्देश्य
3.3	मीन्ड परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
3.4	खटका तथा मुर्की परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
3.5	सूत तथा घसीट
	स्वयं जांच अभ्यास 3
3.6	कण परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 4
3.7	कृंतन
	स्वयं जांच अभ्यास 5
3.8	सारांश
3.9	शब्दावली
3.10	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.11	संदर्भ

3.12	अनुशंसित पठन
3.13	पाठगत प्रश्न

3.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह तीसरी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, मीन्ड, खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए तथा शास्त्रीय संगीत का आधार दृढ़ करने के लिए आधारभूत विषय मीन्ड, खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन विषयों का अध्ययन किया जाता है। इन विषयों के अध्ययन से गायक या वादक को शास्त्रीय संगीत के आधार का ज्ञान होता है और मीन्ड, खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन के आपसी सामंजस्य से जब संगीत प्रदर्शन किया जाता है तो श्रोता अनायास ही प्रफुल्लित हो उठते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी मीन्ड, खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन विषय का अर्थ परिभाषा का विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही शास्त्रीय संगीत के आधारभूत विषयों मे अपनी पकड़/मजबूती कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- मीन्ड विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- खटका विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- मुर्की विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- सूत-घसीट विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- कण विषय का अर्थ समझ सकेंगे।

- कृंतन विषय का अर्थ समझ सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन विषय के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

3.3 मींड़

किसी निश्चित स्वर से दूसरे निश्चित स्वर तक घर्षण द्वारा जाना मीड़ कहलाता है। मीड़ में एक स्वर से दूसरे स्वर तक जाने के लिए नीचे के स्वरों को केवल स्पर्श मात्र करते हैं तथा बीच के स्वरों को खींचते हुए निश्चित स्वर पर आ जाते हैं। मींड़ में रंजकता तथा कोमलता अधिक आ जाती है। यह भी प्राचीन गमक का एक प्रकार है। मींड़ को निकालने के लिए दो स्वरों के ऊपर उल्टा चाँद बनाते हैं। दो स्वरों के ऊपर उल्टा चाँद बनाते हैं, जैसे-प ग या सां प प से ग कहने में म का स्पष्ट उच्चारण नहीं होगा, परन्तु प ग तक आवाज खींचने में म का स्पर्श हो जाएगा।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.1 मीन्ड के लिए क्या चिन्ह हैं?

1) स्वरों के ऊपर खड़ी रेखा

2) स्वरों के ऊपर सीधी रेखा

3) स्वरों के ऊपर उल्टा चाँद

4) स्वरों के ऊपर सीधा चाँद

3.2 मीन्ड के लिए चिन्ह कौन सा है?

1) सां प

2) सां प

3) सां पं

4) कोई नहीं

3.4 खटका तथा मुर्की

खटका तथा मुर्की गमक के ही प्रकार हैं, जिन्हें हिन्दुस्तानी संगीत-पद्धति में स्वतन्त्र नाम दे दिये गये हैं। खटका और मुर्की स्फुरित गमक (प्राचीन गमक का एक प्रकार) के अन्तर्गत आते हैं। गायन तथा वादन में जब दो स्वरों को झटके के साथ गाते अथवा बजाते हैं तब वह खटका कहलाता है।

है। उदाहरण के लिए —सा (स) - सा सा रे नी सा अथवा सा रे नी सा। जब दो या दो से अधिक स्वरों को खटके के साथ कहा जाता है तब मुर्की होती है।

रेसा सारेसा रेसासारे

जैसे — नी अथवा नी नी आदि

खटके और मुर्की का प्रयोग अधिकतर ठुमरी, दादरा, टप्पा आदि खटके में सुनने को मिलता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.3 खटका और मुर्की किसके प्रकार हैं?

1) कण के

2) कृंतन के

3) गमक के

4) कोई नहीं

3.4 गायन तथा वादन में जब दो स्वरों को झटके के साथ गाते अथवा बजाते हैं तब वह ....

कहलाता है।

1) कण

2) खटका

3) मीन्ड

4) कोई नहीं

3.5 सूत अथवा घसीट

सूत प्रायः बिना परदे के वाद्यों पर बजायी जाती हैं तथा सितार पर इसे घसीट के नाम से पुकारते हैं। एक परदे से आरम्भ करते हुए किसी दूरस्थ परदे तक मिजराब के एक ही प्रकार में घसीटते हुए जाने की क्रिया 'घसीट' अथवा 'सूत' कहलाती है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.5 परदे वाले वाद्य पर बजाई जाती है?

1) मीन्ड

2) घसीट

3) सूत

4) कोई नहीं

3.6 बिना परदे वाले वाद्य पर बजाई जाती है?

1) मीन्ड

2) घसीट

3) सूत

4) कोई नहीं

3.6 कण

किसी स्वर को पास वाले किसी दूसरे स्वर से अल्प स्पर्श करना 'कण' कहलाता है। यह पूर्ववर्ती स्वर का हो सकता है अथवा परवर्ती स्वर का भी। जिस स्वर को कण लगाना हो वह स्पष्ट रूप से गाया-बजाया जाता है परन्तु ऐसा करते समय कण-स्वर का हल्का सा स्पर्श शुरू में किया जाता है। उदाहरणार्थ, वीणा पर यदि प को ध का कण देना हो, तो ध के परदे पर ध बजाकर तुरंत उँगली को पंचम पर ले जाया जाता है। यह अलंकार छोटा सा होने पर भी अत्यन्त महत्व का है। कई रागों का अस्तित्व इन कण-स्वरों पर निर्भर हुआ करता है।

पाश्चात्य संगीत में भी कण-स्वर होते हैं। वहाँ इनको 'ग्रेस नोट' कहा जाता है। वहाँ इनका महत्व उतना अधिक नहीं है जितना भारतीय संगीत में।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.7 किसी स्वर को पास वाले किसी दूसरे स्वर से अल्प स्पर्श करना कहलाता है।

1) मीन्ड

2) खटका

3) कण

4) अन्य

3.8 पाश्चात्य संगीत मे कण को क्या कहा जाता है?

1) ग्रेस नोट

2) मेलोडी

3) स्लर

4) कोई नहीं

3.7 कृंतन

यह तंतु-वाद्य की एक विशिष्ट क्रिया है, जिसके अंतर्गत एक बार ही दा या रा बजाकर उसी ध्वनि में एक से अधिक पर्दों में स्वर निकाले जाते हैं। इन स्वरों को निकालने के लिए अलग से दा या रा बजाने की आवश्यकता नहीं होती।

3.8 सारांश

खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन विषय भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अलंकारों के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत के आधार मे मजबूती, तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे लय अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है। राग मे अगर खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन का सही तालमेल हो तो रसानुभूति अनायास ही हो जाती है।

3.9 शब्दावली

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): सप्तक के स्वरों को जब अलंकारों के रूप मे यार राग मे तानों या तोड़ों के रूप मे ताल के साथ बजाया जाता है तो श्रोता उसे सुनकर अनायास ही मंत्रमुग्ध हो जाता है। संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है। श्रुतियों से ही सप्तक के स्वरों का निर्माण हुआ है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।

- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।

3.10 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

स्वयं जांच अभ्यास 1 प्रश्नों के उत्तर

3.1) उत्तर: 3

2) उत्तर 1

स्वयं जांच अभ्यास 2 प्रश्नों के उत्तर

3.3) उत्तर: 3

4) उत्तर: 2

स्वयं जांच अभ्यास 3 प्रश्नों के उत्तर

3.5) उत्तर: 2

3.6) उत्तर: 3

स्वयं जांच अभ्यास 4 प्रश्नों के उत्तर

3.7) उत्तर: 3

3.8) उत्तर: 1

3.11 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

3.12 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

3.13 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. खटका का परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. मुर्की का परिचय लिखिए।

प्रश्न 3. सूत घसीट का परिचय लिखिए।

प्रश्न 4. कण का परिचय लिखिए।

प्रश्न 5. कृंतन का परिचय लिखिए।

प्रश्न 6. खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन का परिचय लिखिए।

प्रश्न 7. खटका मुर्की और कृंतन का परिचय लिखिए।

प्रश्न 8. खटका मुर्की और कण का परिचय लिखिए।

प्रश्न 9. सूत घसीट और कृंतन का परिचय लिखिए।

प्रश्न 10. सूत घसीट और कण का परिचय लिखिए।

प्रश्न 11. खटका मुर्की, सूत घसीट का परिचय लिखिए।

इकाई- 4
राग मारू विहाग, राग मालकौंस और राग वृंदवानी सारंग

इकाई की रूपरेखा

4.1	भूमिका
4.2	उद्देश्य
4.3	मारू विहग राग परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
4.4	मालकौंस राग परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
4.5	वृंदवानी सारंग राग परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 3
4.6	सारांश
4.7	शब्दावली
4.8	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9	संदर्भ
4.10	अनुशंसित पठन
4.11	पाठगत प्रश्न

4.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह चौथी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। रागों के वादी सवादी और अनुवादि स्वरों के साथ अगर सही न्याय किया जाए तो राग अनायास ही श्रोता को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग राग भी ऐसे ही मधुर राग है जिनके अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी इन रागों को समझ सकेगा और इनके अभ्यास से अपने क्रियात्मक पक्ष को उच्च स्तर पर निखार सकता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- मारू विहाग राग का अर्थ समझ सकेंगे।
- मालकौंस राग का अर्थ समझ सकेंगे।
- वृंदवानी सारंग राग का अर्थ समझ सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग राग के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

4.3 राग मारू विहाग परिचय

राग- मारू विहाग

थाट- कल्याण

जाति- औड़व-सम्पूर्ण

वादी- ग

संवादी- नि

स्वर- म॑ तीव्र और म शुद्ध और शेष स्वर शुद्ध

वर्जित स्वर- आरोह मे रे ध

न्यास- ग प नि

समय- रात्रि प्रथम पहर

समप्राकृतिक राग- विहाग, कल्याण

आरोह- ऩि सा म ग म॑ प नि सां

अवरोह- सां नि ध प म॑ ग म॑ ग रे सा

पकड़- ग म॑ प म॑ ग, म॑ ग रे सा, नि सा म ग म॑ प

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

4.1 राग मारू विहाग का वादी स्वर कौन सा है ?

1) ग

2) ध

3) प

4) कोई नहीं

4.2 राग मारू विहाग का संवादी स्वर कौन सा है ?

1) ग

2) ध

3) नि

4) कोई नहीं

4.3 राग मारू विहाग की जाति क्या है?

1) औड़व - सम्पूर्ण

2) सम्पूर्ण- षाड़व

3) षाड़व- सम्पूर्ण

4) कोई नहीं

4.4 राग मारू विहाग का समप्राकृतिक राग कौन सा है?

1) भैरव

2) कल्याण

3) देश

4) कोई नहीं

4.5 राग मारू विहाग का थाट कौन सा है?

1) कल्याण

2) बिलावल

3) आसावरी

4) कोई नहीं

4.4 राग मालकौंस परिचय

राग- मालकौंस

थाट- भैरवी

जाति- औड़व- औड़व

वादी- म

संवादी- सा

स्वर- ग ध नि कोमल सभी स्वर शुद्ध

वर्जित स्वर- रे और प

न्यास- सा म

समय- रात्रि तीसरा पहर

समप्राकृतिक राग- चंद्रकौंस

आरोह- सा ग म ध नि सां

अवरोह- सां नि ध म ग म ग सा

पकड़- ध़ नि़ सा म, ग म ग सा

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

4.6 राग मालकौंस का वादी स्वर कौन सा है ?

1) म

2) ध

3) प

4) कोई नहीं

4.7 राग मालकौंस का संवादी स्वर कौन सा है ?

1) रे

2) ध

3) सा

4) कोई नहीं

4.8 राग मालकौंस की जाति क्या है?

1) सम्पूर्ण - सम्पूर्ण

2) सम्पूर्ण- षाड़व

3) षाड़व- सम्पूर्ण

4) कोई नहीं

4.9 राग मालकौंस का समप्राकृतिक राग कौन सा है?

1) भैरव

2) कलिंगड़ा

3) चंद्रकौंस

4) कोई नहीं

4.10 राग मालकौंस का थाट कौन सा है?

1) भैरवी

2) बिलावल

3) भैरव

4) कोई नहीं

4.5 राग वृंदवानी सारंग परिचय

राग वृंदवानी सारंग

थाट- काफी

जाति- औड़व-औड़व

वादी- रे

संवादी- प

स्वर- दोनों निषाद, शेष स्वर शुद्ध

वर्जित स्वर- ग और ध

न्यास- रे प सा

समय- मध्यान्ह

समप्राकृतिक राग- सूर मल्हार

आरोह- ऩि सा रे म प नि सां

अवरोह- सां नि प म रे सा

पकड़- रे म प नि प, म रे ऩि सा, म रे रे म प म रे ऩि सा रे सा

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

4.11 राग वृंदवानी सारंग का वादी स्वर कौन सा है ?

1) रे

2) ध

3) प

4) कोई नहीं

4.12 राग वृंदवानी सारंग का संवादी स्वर कौन सा है ?

1) म

2) प

3) रे

4) कोई नहीं

4.13 राग वृंदवानी सारंग की जाति क्या है?

1) सम्पूर्ण - सम्पूर्ण

2) सम्पूर्ण- षाड़व

3) औड़व – औड़व

4) कोई नहीं

4.14 राग वृंदवानी सारंग का गायन वादन समय कौन सा है?

1) सुबह का प्रथम पहर

2) सायंकाल

3) मध्यान्ह

4) कोई नहीं

4.15 राग वृंदवानी सारंग का थाट कौन सा है?

1) आसावरी

2) कल्याण

3) काफी

4) कोई नहीं

4.6 सारांश

मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग राग भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ताल के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग राग अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

4.7 शब्दावली

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।

- लय (Lay): संगीत के समान गति को लय कहते हैं, संगीत में लय अत्यंत महत्पूर्ण हैं, लय के बिना संगीत की कल्पना भी करना असंभव हैं।
- मात्रा (Matra): ताल की इकाई को मात्रा कहते हैं।
- ताली (Taali): सम के अलावा अन्य विभागों की पहली मात्रा पर जहाँ हथेली पर दुसरे हाथ की हथेली के आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न की जाती है, उसे ताली कहते हैं।
- खाली (Khali): ताल देते समय जहाँ विभाग की प्रथम मात्र पर ध्वनि न करके केवल हाथ हिलाकर इशारा कर देते हैं, उसे 'खाली' कहते हैं. अधिकतर खाली ताल के बीच की मात्र अथवा उसके आस पास हीं कहीं पड़ती है।
- विभाग (Vibhag): ताल को कुछ निश्चित मात्राओं में बांटना जिससे भरे एवं खाली जगहों का पता लगे उसे विभाग कहते हैं

4.8 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

4.1) उत्तर : 1

4.2) उत्तर: 3

4.3) उत्तर: 1

4.4) उत्तर: 2

4.5) उत्तर: 1

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

4.6) उत्तर : 1

4.7) उत्तर: 3

4.8) उत्तर: 4

4.9) उत्तर: 3

4.10) उत्तर: 1

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 3

4.11) उत्तर: 1

4.12) उत्तर: 2

4.13) उत्तर: 3

4.14) उत्तर: 3

4.15) उत्तर: 2

4.9 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2002). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

4.10 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

4.11 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. मारू विहाग राग का संक्षिप्त परिचय लिखें।

प्रश्न 2. मालकौंस राग का संक्षिप्त परिचय लिखे।

प्रश्न 3 वृंदवानी सारंग राग का संक्षिप्त परिचय लिखें।

प्रश्न 4. मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग रागों के संक्षिप्त परिचय लिखें।

इकाई-5
ख्याल और ध्रुपद

इकाई की रूपरेखा

5.1	भूमिका
5.2	उद्देश्य
5.3	ख्याल परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
5.4	ध्रुपद परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
5.5	सारांश
5.6	शब्दावली
5.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8	संदर्भ
5.9	अनुशंसित पठन
5.10	पाठगत प्रश्न

5.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह पाँचवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में ख्याल और ध्रुपद का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। राग वादन मे जिस प्रकार गतें बजाई जाती है ठीक उसी प्रकार गायन मे भी राग के छोटे बड़े ख्याल गाए जाते हैं। ख्याल गायन से पहले ध्रुपद गायन प्रचार मे था। जिसे मर्दाना गायकी भी काहा जाता था।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी ख्याल और ध्रुपद विषय का अर्थ परिभाषा और इनके प्रकार और रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर अलंकारों के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात स्वयं अलंकार बनाने मे समर्थ हो सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- ख्याल का अर्थ और परिचय समझ पाएंगे।
- ख्याल का अर्थ और ख्याल के प्रकारों को जान पाएंगे।
- ध्रुपद का अर्थ समझ पाएंगे।
- ध्रुपद का अर्थ परिभाषा और इसके प्रकारों को समझ सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल ख्याल और ध्रुपद विषय का अध्ययन कर परएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन और सांगीतिक यात्रा मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

5.3 ख्याल परिचय

"ख्याल" एक फारसी शब्द है जिसका अर्थ है कल्पना, विचार, सरजना इत्यादि। जब कोई गायक किसी राग में बंधे हुए गीत को गाकर अपनी कल्पना और बुद्धि के अनुसार, राग के नियमों को ध्यान में रखते हुए, उसको आलाप तथा तान द्वारा भिन्न-भिन्न अलंकारों से सुशोभित करता है, तब उस गायकी को ख्याल के नाम से सम्बोधित किया जाता है। ख्याल भी एक तरह का गायन है। आजकल यह हिन्दुस्तान का एक ऊँचे दर्जे का गायन माना जाता है।

ख्याल शैली का आविष्कार किसने किया इसके विषय में विभिन्न मत हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि ख्याल का आविष्कार16वीं शताब्दी के जौनपुर के सुल्तान हुसैन शर्की ने किया। इसके विपरीत कुछ विद्वानों का कहना है कि ख्याल का आविष्कार हुसैन शर्की ने नही किया अपितु वह केवल ख्याल का प्रेमी था तथा उसके समय में ख्याल का प्रचार अच्छा हुआ। श्री भातखण्डे जी का कहना है कि ख्याल की तरह गाने का प्रचलन पहले से ही समाज में चला आ रहा था परन्तु यह समाज में मान्य नहीं था। आगे चल कर सुलतान हुसैन शर्की ने इस गाने को पसन्द किया तथा उसने गायकों को प्रोत्साहन दिया और इस तरह उसका प्रचार बढ़ गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि हुसैन शर्की ख्याल के आविष्कारक नही अपितु प्रचारक थे।

दूसरे मतानुसार, अमीर खुसरो ख्याल के आविष्कारक थे। ख्याल फारसी भाषा का शब्द है। अतः सम्भव है कि उन्होंने पहले से चली आ रही इस गायन शैली का नाम ख्याल रख दिया हो परन्तु यह कहना ठीक नही कि अमीर खुसरो ख्याल के आविष्कारक हैं परन्तु अमीर खुसरो ने कई ख्यालों की रचना अवश्य की है।

ख्याल के प्रकार :-

ख्याल गायन के दो प्रकार प्रचलित हैं। एक कलावती ख्याल और दूसरा कव्वाली ख्याल। विद्वानों के मतानुसार कव्वाली ख्याल का आविष्कार सबसे पहले 14वीं सदी में अलाऊदीन खिलजी के दरबार के प्रसिद्ध संगीतज्ञ, कवि और राजमन्त्री हज़रत अमीर खुसरो ने किया। अमीर खुसरो ने ख्याल ही नहीं अपितु कई नए राग, गीत प्रकार, वाद्यों और तालों को भी इजाद किया। 'कलावती या कलावंती' ख्याल का आविष्कार सबसे पहले 15वीं सदी में जौनपुर के बादशाह सुल्तान हुसैन शर्की (1458-1480) ने किया था। उन्होंने ख्याल ही नही अपितु कई नए रागों को भी इजाद किया।

प्राचीन काल में ख्याल गायन का स्थान ऊँचा नही था। सभ्य समाज में भी ख्याल गायन का प्रवेश निषेद्ध माना जाता था। सभ्य समाज में बड़े-बड़े गायक ध्रुपद को गाते थे क्योंकि प्राचीन समय में ध्रुपद गायन का स्तर ऊँचा था और ख्याल गायन को नीचा स्तर प्राप्त था। उस समय न तो ख्याल गायन लोकप्रिय था और न ही उसका अधिक प्रचार था। यद्यपि ख्याल गायन का आविष्कार 14वीं और 15वीं शताब्दी में हो चुका था तब भी न तो 17वीं शताब्दी तक उसका प्रचार हुआ था और न ही वह लोकप्रिय था। ख्याल गायन का अधिकतर प्रचार 18वीं शताब्दी के आरम्भ में मुगल बादशाह मुहम्मद शाह रंगीले के समय में आरम्भ हुआ। मुहम्मद शाह के दरबार में सदारंग और अदारंग दो प्रसिद्ध गायक थे जिन्होंने ख्याल गायन की बहुत उन्नति की। उन्होंने हज़ारों ख्याल रचे और अपने शिष्यों को सिखाए। मुहम्मद शाह के समय से ही ख्याल गायन भारत में ज़ोरों से प्रचलित और लोकप्रिय हुआ। उनके बाद उनके शिष्यों ने ख्याल गायन का प्रचार किया। आज समाज में ध्रुपद को ही नही अपितु ख्याल गायन को भी ऊँचा स्थान प्राप्त है। यहाँ तक की ख्याल गायन ध्रुपद से अधिक लोकप्रिय है।

गीत रचना तथा गायन शैली दोनों दृष्टि से ख्याल का अपना स्थान है। इसका गीत छोटा और केवल दो या तीन पंक्तियों का होता है परन्तु इसको गायक अपनी कल्पना से इतना अधिक सजा देता है कि यह गीत नवीन सौन्दर्य के साथ खिल उठता है। गायक की कल्पना की उड़ान जितनी ऊँची होगी उतना ही ख्याल पुराना होते हुए भी नवीन बन जाता है। किसी राग के भीतर सुन्दर-स्वर-विन्यास करना कलाकार की प्रतिभा पर निर्भर करता है। ख्याल के चरण को क्रमशः स्थाई और अन्तरा कहते हैं। जो ख्याल विलम्बित लय में बांधे जाते हैं उन्हें 'विलम्बित ख्याल और जो द्रुत लय में बांधे जाते हैं उन्हें द्रुत ख्याल कहते हैं। ख्याल गायन में स्वरों का उतना महत्व नही होता जितना स्वरों की सजावट का। गायक राग के अनुकूल विभिन्न स्वर-अलंकारों, गमकों तथा तानों से गीत को सजीव एवं सम्प्राण बना देता है।

ख्याल गाने से पूर्व राग वाचक शब्दों का थोड़ा सा आलाप किया जाता है और बंदिश गाने के बाद एक-दो स्वर लेकर बढ़त की जाती है। बढ़त में कण, मींड, आलाप, शब्दालाप, बहलावा, गमक आदि का प्रयोग होता है। तानों और बोलतानों के माध्यम से व्याकुल भवनाओं की अभिव्यक्ति की जाती है। तानों के अंत में सुन्दर तिहाई लगाते हैं।

ख्याल गायन हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति के सभी रागों में गाया जाता है। एकताल, तीनताल, आड़ा चौताल, झूमरा, तिलवाड़ा आदि तालों का प्रयोग ख्याल गायन शैली में होता है। ताल के लिए तबले की संगति की जाती है। ख्याल

गायन में श्रृंगार रस प्रधान है। इसकी भाषा साधारण होती है तब भी यह सुन्दर, मधुर व मनोहर गायन है और आजकल यही लोकप्रिय भी है। इसके गीतों की भाषा हिन्दी, उर्दू और ब्रज होती है।

ख्याल दो प्रकार का होता है :-

1) बड़ा ख्याल :-

बड़ा ख्याल अधिकतर एकताल, आड़ा चौताल, झूनरा, तिलवाड़ा आदि तालों में गाया जाता है। इसके स्थाई और अन्तरा दो भाग होते हैं। बड़े ख्याल की बंदिश ध्रुपद के समान होती है। इसकी लय विलम्बित होती है। कुछ लोग अति विलम्बित लय में भी ख्याल गाते हैं। इस गायन शैली में स्वर-आलाप, बोल-आलाप, तानों व गमकों आदि के साथ गायन किया जाता है। बड़े ख्याल की प्रकृति गम्भीर होती है और इसमें श्रृंगार, शान्त और करूण रस की प्रधानता रहती हैं।

2) छोटा ख्याल :-

छोटा ख्याल अधिकतर तीन ताल में गाया जाता है। यह चंचल प्रकृति की सुन्दर रचना होती है। इसकी गति में चंचलता पाई जाती है। इसके स्थाई व अन्तरा दो भाग होते है। इसकी लय द्रुत होती है लेकिन कुछ गायक मध्य लय में गाकर चौगुन की तानें लेते हैं और कुछ द्रुत लय में गाकर अतिद्रुत लय में ताने लेते हैं। बड़े ख्याल के बाद उसी राग का छोटा ख्याल गाया जाता है। इसमें भी तानों, बोलतानों इत्यादि का प्रयोग किया जाता है।

ख्याल शैली शास्त्रीय संगीत की सर्वाधिक मानी हुई शैली है। इसके विभिन्न घराने बने हैं जैसे - ग्वालियर घराने में नत्थन पीर बक्श, हदू खां, हस्सु खां, रहमत खां, निसार हुसैन खां, बझे बुआ, बाल कृष्ण बुआ, शंकर राव पंडित, पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर तथा ओंकार नाथ ठाकुर इत्यादि प्रसिद्ध गायक हुए। इसी प्रकार दिल्ली घराने में तानरस खां, स खां, अली बक्श, फतेह फतेह अली आदि श्रेष्ठ ख्याल गायक हुए। आगरा घराने के स्व. फैयाज खां तथा विलायत हुसैन अपनी रंगीली गायकी के लिए प्रसिद्ध हैं। जयपुर घराने के अल्लादियां खां, भूर्जी खां, केसर बाई केरकर, मोघुबाई कुर्डीकर प्रसिद्ध गायकों में से है। इसी प्रकार किराना घराना में अब्दुल करीम खां, वहीद खां, हीरा बाई बड़ोदकर तथा

भीमसेन जोशी आदि प्रसिद्ध गायकों में से हुए हैं। पटियाला घराने के गायकों में स्व. आशिक अली, इमानत अली तथा बड़े गुलाम अली खां की जोड़ी इसी घराने की शिष्य परम्परा में हैं।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

5.1 ख्याल कौन सी भाषा का शब्द है?

1) अंग्रेजी

2) उर्दू

3) फारसी

4) हिन्दी

5.2 ख्याल कितने प्रकार के है?

1) 1

2) 2

3) 3

4) कोई नहीं

5.3 इनमे से कौन सा ख्याल का प्रकार है?

1) विचित्रा

2) विशाला

3) नंदा

4) कोई नहीं

5.4 इनमे से कौन सा ख्याल का प्रकार है?

1) छोटा ख्याल

2) विचित्रा

3) नंदा

4) कोई नहीं

5.4 ध्रुपद

"ध्रुपद" भारतीय संगीत की प्राचीन गायन शैली है। ध्रुपद के उद्गम के विषय में कुछ निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि कब और किसने इस गायन शैली को जन्म दिया। संगीत विद्वानों ने ध्रुपद के उद्‌गम के बारे में अपने भिन्न-भिन्न मत दिए हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि यह उत्तर वैदिक काल की गान्धर्व शैली है। कुछ विद्वान ध्रुपद का जन्म "ध्रुवा" के द्वारा मानते हैं। भरत के नाट्य शास्त्र में धुवा नामक गीत का उल्लेख मिलता है कि ध्रुवा एक प्रकार का विशेष नियमबद्ध गीत होता था जिससे विदित होता है कि हो सकता है कि "ध्रुवा" गीत में पाए जाने वाले पद को ही "ध्रुपद" कहा जाता रहा हो। कुछ का विचार है कि शारंगदेव द्वारा कथित शुद्ध गीति ही "ध्रुपद " कहलाती थी।

ध्रुपद गायकी का आविष्कारक कौन था इसके विषय में निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता परन्तु यह तो निर्विवाद है कि 15वीं शताब्दी में ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर के समय में धुपद शैली की परम्परा का विकास हुआ। इन्होंने विपदाकाल में अर्थात् विदेशी आक्रमण काल में इस कला की रक्षा की और इसे एक विकसित रूप प्रदान किया। राजा मानसिंह ध्रुपद के विशेषज्ञ थे। इन्होंने स्वयं भी कई ध्रुपद रचे। इनके समय में ध्रुपद गायकी की बड़ी उन्नति हुई और ध्रुपदों की रचना की गई। मानसिंह तोमर ने ध्रुपद गायकों को प्रोत्साहन देकर इस गायन शैली का अच्छा प्रचार करवाया। बैजू, गोपाल लाल, बक्शु और स्वयं राजा मानसिंह ने इस गायन शैली में परिवर्तन किए। गोपाल लाल ने नवीन रूपों की रचना की, राजा मानसिंह ने भावों और उसकी अभिव्यक्ति में नवीनता स्थापित की, बक्शु ने तुकों की व्यवस्था में परिवर्तन किया। इससे यह स्पष्ट है कि उस समय ध्रुपद गायन ज़ोरों पर था और उस समय बक्शु, भगवान, गोपाल नायक आदि प्रसिद्ध कलावन्त थे।

सम्राट अकबर के समय में अकबर के सभी दरबारी गायक ध्रुपद ही गाते थे। बाबा हरिदास, तानसेन, शेख बैजू सूरदास आदि ध्रुपद के सुप्रसिद्ध कलावन्त थे। इनके रचे ध्रुपद आज भी सुनने को मिलते हैं। मोहम्मद शाह रंगीले के दरबारी गायक अदारंग-सदारंग ध्रुपद ही गाते थे और उन्होंने अपने वंशजों को ध्रुपद गायन ही सिखाया।

ध्रुपद गायकी का विषय प्रायः भक्ति, ईश्वर स्तुति, राजाओं की प्रशंसा, मंगल उत्सवों का वर्णन, धर्मत्व, पुराण विषय, संगीत शास्त्रों की श्रुति, स्वर-ग्राम तथा मूर्छना आदि के लक्षण वर्णन आदि होते हैं। यह गायकी वीर रस द्वारा शक्ति का

संचार कर उत्साह बढ़ाती है और भक्ति रस द्वारा ईश्वर के समीप ले जाती है और शान्त रस के द्वारा शांति का संचार करती है।

ध्रुपद हिन्दुस्तान का एक गम्भीर एवं ज़ोरदार गायन माना जाता है। कुछ लोगों का विचार है कि ध्रुपद एक गम्भीर गायन है। ध्रुपद गायन इतना मरदाना है कि स्त्रियों की कोमल आवाज़ के लिए यह गायन उपयुक्त नही माना जाता लेकिन फिर भी स्त्रियाँ इस गायन को करती व सीखती हैं। ध्रुपद एक कठिन गायकी है अतः इसके लिए उत्तम स्वर ज्ञान, अच्छा स्वर अभ्यास, लय का ज्ञान व राग का ज्ञान होना आवश्यक है। गीत का यह प्रकार मध्ययुग से आज तक बराबर प्रचलित है। इसमें स्वर, लय तथा साहित्य इन तीनों अंगों का समुचित समावेश है।

ध्रुपद में राग की शुद्धता का ध्यान :-

ध्रुपद गायन में राग की शुद्धता का विशेष महत्व होता है। राग के ठीक स्वरूप इत्यादि बातों का विशेष ध्यान रखा जाता है। जैसे कि यदि भैरवी में ही कोई ध्रुपद बंधा होगा तो उस ध्रुपद में सभी कोमल स्वर ही लगेंगे क्योंकि भैरवी राग का शुद्ध स्वरूप नही है। ध्रुपद के गीत अधिकतर हिन्दी, उर्दू व बृजभाषा में होते हैं। ध्रुपद में तानों का प्रयोग नहीं किया जाता अपितु गीत को ही दुगुन, चौगुन व आठगुन लय में गाया जाता है।

और गमक का अधिक काम दिखाया जाता है। इसलिए धुपद गाने के लिए गला पूरी तरह तथार काना चाहिए क्यों कि गले की तैयारी के बिना गमक लेना कठिन है। इस गायकी के लिए गायक के रोम-रोम में लय सनाई होनी चाहिए।

ताल का प्रयोग :-

ध्रुपद गायकी में चौताल, सूलताल, झंपा, तीव्रा, रूद्र, ब्रहम, लक्ष्मी आदि तालों का प्रयोग पखावज और तबला आदि वाद्यों द्वारा किया जाता है। पखावज इस गायकी के लिए उपयुक्त ताल वाद्य है। क्योंकि पखावज गम्भीर वाद्य होने के कारण इस गम्भीर प्रकृति की गायकी के लिए अधिक उपयुक्त है। तबले पर यह बोल खुले हाथों द्वारा बजाए जाते हैं। जिस मुक्त रूप से यह ताल बजाए जाते हैं, उसे "थपिया बाज" कहते हैं।

ध्रुपद की वाणियाँ या बाणियाँ :-

ध्रुवपद का संक्षिप्त रूप ध्रुपद है। इसके गायक ध्रुपदिए कहलाते हैं। मध्ययुग में इनके लिए कलावन्त संज्ञा थी। ध्रुपद की विभिन्न शैलियों को वाणी कहा जाता था। ये वाणियों चार प्रकार की थीं।

1. गोबरहार वाणी

2. डागुर वाणी

3. खण्डार वाणी

4. नौहार वाणी

इन वाणियों का आविष्कार तत्तकालीन प्रसिद्ध गायकों ने किया। 19वीं शताब्दी के "मुआदनुल मौसिकी" नामक ग्रन्थ के अनुसार ग्वालियर वासी तानसेन की वाणी गोबरहारी कहलाई, डांग या डागर प्रदेश के निवासी बृजचन्द की वाणी डागुर कहलाई, खण्डार प्रदेश के निवासी श्री चन्द की वाणी खण्डार कहलाई तथा चौथी वाणी नौहार वाणी कहलाई। तानसेन के एक ध्रुपद में इन चारों वाणियों एवं उनके तुल्नात्मक स्थान का स्पष्ट संकेत है -

राजा गोबरहार, फौजदार खण्डार।

दीवान डागुर, बक्शी नौहार ।।

अर्थात् गोबरहार वाणी राजा के समान, खण्डार वाणी सेनापति के समान, डागुर मन्त्री के तथा नौहार वाणी कोषाधिकारी के समान है। वर्तमान में. इन वाणियों का प्रायः लोप हो चुका है। आज घुपदियों का केवल डागुर घराना या वाणी ही सुप्रसिद्ध है।

ध्रुपद गाने का तरीका

ध्रुपद एक शब्द प्रधान गीत-शैली है। शब्द प्रधान होने के कारण इसकी शैली आलाप प्रधान होना ज़रूरी है। इसकी बढ़त आलापों या बहलावों से की जाती है। इसमें आकार वाली तानबाज़ी सर्वथा वर्जित है।

लेकिन बोलतान, गमक तान, मींड, आन्दोलन, हलक और लहक इत्यादि इसके विशेष अलंकार हैं। ध्रुपद गायन से पूर्व नोम-तोम का आलाप किया जाता है। यह आलाप नोम, तोम, रेना, तनना जैसे अक्षरों या बोलों से किए जाते हैं। इसमें आलाप विलम्बित, मध्य तथा द्रुतलय में क्रमशः किया जाता है।

ध्रुपद गायन के अनेक घराने प्रचलित हुए और बड़े-बड़े गायकों ने इस शैली को लोकप्रिय बनाया। जैसे तानसेन तथा उनके वंशज। इसके अतिरिक्त अन्य लोगों ने भी इस गायकी को लोकप्रिय बनाने व उसका प्रचार करने के लिए उल्लेखनीय कार्य किए। इनमें कुछ कलाकार इस प्रकार हैं हैदर बक्श, बैहराम खां (जयपुर), अलाबंदे खां, ज़ाकिरूदीन खां, नसीरूदीन (इन्दौर), चंदन चौबे (मथुरा) इत्यादि। इस प्रकार ध्रुपद हमारे संगीत की एक पुरानी व गम्भीर गायन शैली है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

5.5 शारंगदेव के अनुसार ध्रुपद का किस गीति से उत्पन्न माना गाया है?

1) भिन्ना गीति

2) शुद्धा गीति

3) गौड़ी गीति

4) कोई नहीं

5.6 किस राज के समय मे ध्रुपद परंपरा का विकास हुआ।

1) मान सिंह तोमर

2) अकबर

3) हुमायूँ

4) कोई नहीं

5.7 ध्रुपद गायकी को और किस नाम से पुकारा जाता है?

1) ठेठ गायकी

2) चंचल गायकी

3) मर्दाना गायकी

4) कोई नहीं

5.8 ध्रुपद की कितनी वाणियाँ थी?

1) 5

2) 3

3) 3

4) 4

5.9 इनमे से कौन सी ध्रुपद की वाणी नहीं है?

1) गोबरहार वाणी

2) नौहार वाणी

3) नंदा वाणी

4) कोई नहीं

5.5 सारांश

ख्याल और ध्रुपद भारतीय शास्त्रीय संगीत के महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। झाल के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी, वैचित्र्य और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे ख्याल और ध्रुपद के अध्ययन से संगीतज्ञ के संगीत मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

5.6 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

5.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

5.1) उत्तर: 3

5.2) उत्तर: 2

5.3) उत्तर: 4

5.4) उत्तर: 1

5.आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

5) उत्तर: 2

5.6) उत्तर: 1

5.7) उत्तर: 3

5.8) उत्तर: 4

5.9) उत्तर: 3

5.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

5.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

5.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. ख्याल का अर्थ एवं परिभाषा लिखें।

प्रश्न 2. ख्याल का अर्थ परिभाषा एवं इसके प्रकारों को विस्तार सहित लिखें।

प्रश्न 3. ख्याल का अर्थ परिभाषा एवं इसके प्रकारों मे छोटे ख्याल का विस्तार सहित लिखें।

प्रश्न 4. ख्याल का अर्थ परिभाषा एवं इसके प्रकारों मे बड़े ख्याल का विस्तार सहित लिखें।

प्रश्न 5. ध्रुपद का अर्थ एवं परिभाषा लिखें।

प्रश्न 6. ध्रुपद का अर्थ परिभाषा एवं वाणियों को विस्तार सहित लिखें।

इकाई-6
शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत

इकाई की रूपरेखा

6.1	भूमिका
6.2	उद्देश्य
6.3	शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
6.4	सारांश
6.5	शब्दावली
6.6	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.7	संदर्भ
6.8	अनुशंसित पठन
6.9	पाठगत प्रश्न

6.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह छठी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों को गाने बजाने का एक निश्चित समय निर्धारित है। अगर किसी भी राग को उस निर्धारित समय पर प्रस्तुत किया जाए तो उस राग की मिठास और सुंदरता की ज्यादा अनुभूति होती है। इसलिए इस विषय के अध्ययन से विद्यार्थी को इन विधाओं का गहरा अनुभव हो पाएगा और वो इन्हें समझ कर अपने संगीत जीवन मे आत्मसात कर पाएगा।

इसके साथ ही सुगम संगीत मे ऐसा नहीं होता। अर्थात इसमें शास्त्रीय संगीत की तरह कड़े नियम नहीं हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि शास्त्रीय संगीत मे ही कुछ नियमों को दरकिनार कर जो संगीत प्रस्तुत किया जाता है उसे सुगम संगीत कहा जाता है जो संगीत की एक अलग विधा (सुगम संगीत) के रूप मे जाना जाता है। जिस प्रकार शास्त्रीय संगीत केवल कुछ ही चुनिंदा लोगों की पसंद होती है ठीक उसके विपरीत सुगम संगीत हर इंसान की पसंद होती है क्यूंकि इसमे शास्त्रीय संगीत के जैसे कड़ी नियम नहीं होते।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत का अर्थ परिभाषा और इन के प्रकार और रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे ।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- सुगम संगीत का अर्थ समझ सकेंगे।
- शास्त्रीय संगीत का अर्थ समझ पाएंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

6.3 शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत परिचय

लोक संगीत जब समृद्धि की पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है, तब उसमें से कुछ सामान्य सिद्धांतों का संचयन करके उस संगीत के शास्त्र का निर्माण किया जाता है और तब लोक संगीत ही शास्त्र की उँगली पकड़ कर शास्त्रीय संगीत कहलाने लगता है। शास्त्र का निर्माण उस समृद्ध संगीत को परिष्कृत और समृद्ध रूप में बनाये रखने तथा उसे स्थायित्व प्रदान करने के लिए ही किया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि मूलतः लोक संगीत ही शास्त्रीय संगीत में परिणत हो जाता है। शास्त्रीय संगीत में लोक संगीत का जन-मन-रंजन का भाव तो निश्चित रूप से होता ही है, किन्तु उसकी स्वछन्दता में कुछ बाह्य प्रतिबन्ध लगा दिए जाते हैं, जो मुलतः संगीत की रक्षा का ही विधान करते हैं।

1 शास्त्रीय संगीत

संगीत भारत की समृद्ध सांस्कृतिक संम्पत्ति का एक प्रमुख अंग है। जहाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत की दीर्घकालीन परम्परा चौथी शताब्दी से शुरू होती है। भारतीय शास्त्रीय संगीत का विकास अगणित प्रमुख संगीत शास्त्रीयों की उपलब्धी का परिणाम है। उन्होंने शास्त्रीय संगीत की साधना करके इस नियमबद्ध संगीत को विकसित रूप प्रदान किया। भारतीय शास्त्रीय संगीत अत्यन्त सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक है। जो संगीत शास्त्र के नियमों का पालन करके गाया-बजाया जाए वही शास्त्रीय संगीत कहलाता है। हमारे बड़े-बड़े संगीत विद्वान बताते हैं कि शास्त्रीय संगीत का जन्म लोक संगीत से हुआ है। लोक संगीत में से ही कुछ सामान्य सिद्धान्तों का संचयन करके उस संगीत के शास्त्र का निर्माण किया जाता है और फिर उस समृद्ध संगीत को परिष्कृत और स्थायित्व प्रदान कर दिया जाता है और इस प्रकार मूलतः लोक संगीत ही शास्त्रीय संगीत में परिवर्तित हो जाता है। शास्त्रीय संगीत में शास्त्र सम्मत नियमों और बन्धनों का निर्वाह कर उसे प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय संगीत का उदेश्य जन मनोरंजन तो है ही पर उसकी स्वछन्दता में बाह्य प्रतिबंध लगा देते हैं जो उसके शास्त्रीय रूप की रक्षा कर सके।

शास्त्रीय संगीत का जन्म चाहे लोक संगीत से ही हुआ है लेकिन दोनों में बहुत अन्तर पाया जाता है क्योंकि इसे शास्त्रीय नियमों में बाँध दिया गया है। शास्त्रीय संगीत में उच्च विकसित साहित्यिक तत्व होते हैं। शास्त्रीय संगीत की स्वर रचना, भाव, लय, ताल सभी में शास्त्रीय नियमों का पालन करते हुए ही गाना बजाना पड़ता है। अन्यथा उनका प्रस्तुतिकरण आकर्षक होने की अपेक्षा निरस लगने लगता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक ही रूप है जो राग गायन प्रणाली है और इसी के अन्तर्गत ध्रुपद, धमार, ख्याल आदि शैलियाँ आती है और इनका सभी संगीत से सम्बन्धित लोग शास्त्रीय ढंग से ही प्रयोग करते हैं। समय के परिवर्तन के साथ कुछ परिवर्तन शास्त्रीय संगीत में आता है पर शास्त्र के मूल नियमों का पालन ज्यों का त्यों ही होता रहता है।

शास्त्रीय संगीत सीखकर तथा अभ्यास से ही गाया जा सकता है इसलिए इसके विषय में यह कहा जाता है कि इसी कारण यह संगीत एक श्रेणी के लोगों तक ही सीमित रह जाता है और इसकी समझ जनसाधारण से परे की बात हो जाती है। शास्त्रीय संगीत में दो पंक्तियों में ही एक लम्बी कहानी का प्रस्तुतिकरण कर दिया जाता है। गीतों के शब्द शास्त्रीय संगीत में बन्दिश कहे जाते हैं, जिसमें एक ही चित्र को स्वरों के माध्यम से अनेक रूपों में प्रस्तुत किया जाता है। कहने का तात्त्पर्य यह है कि शास्त्रीय संगीत उसे कहते हैं जिसमें गायन, वादन और नृत्य के कुछ निर्धारित नियम होते हैं जिनका पालन करने में शास्त्रीय संगीत का रूप विकृत नहीं होता। शास्त्रीय संगीत में नियमों का पालन करना आवश्यक होता है, ऐसा न करने से राग हानि होती है। इसके साथ ही इसमें लय-ताल की सीमा में भी रहना पड़ता है अर्थात् शास्त्रीय संगीत में जहाँ राग के नियमों का पालन होता है वहाँ ताल के बंधन में ही राग का गाना-बजाना होता है। ध्रुवपद, धमार ख्याल, ठुमरी, टप्पा आदि शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत् ही आते हैं। शास्त्रीय संगीत में लय, ताल, स्वर के बंधन को स्वीकारने के साथ शास्त्रीय संगीत के उपकरण वाद्य, श्रोता, स्थान का प्रतिबंध भी स्वीकारना पड़ता है।

शास्त्रीय संगीत स्वामी हरिदास, तानसेन, बैजू बावरा इत्यादि महान संगीतकारों की विरासत है। शास्त्रीय संगीत घरानों की शक्लें ले चुका है। शास्त्रीय संगीत को 'मार्ग संगीत' भी कहा जाता है। शास्त्रीय संगीत, संगीत का वह पक्ष है जो व्यक्ति विशेष की प्रतिभा के अनुसार विशिष्ट शास्त्र में बँध गया है। शास्त्रीय संगीत के प्रेरणा-स्त्रोत व्यक्ति एवं शास्त्र है, और शास्त्र के नियमों में बँधा हुआ शास्त्रीय संगीत स्वतंत्रता पूर्वक विचरने का अधिकारी नहीं है। शास्त्रीय संगीत के

प्रयोग और परीक्षण के लिए शास्त्र ज्ञान और विशिष्ट अभ्यास-क्रम की आवश्यकता होती है। शास्त्रीय संगीत वैयक्तिक साधना का प्रतीक है। शास्त्रीय संगीत में कला पक्ष की प्रधानता होती है।

2 सुगम संगीत

सुगम संगीत एक ऐसी विधा है, जिसके लिए गागर में सागर की कहावत चरितार्थ होती है। सुगम का अर्थ है सरल अर्थात् जिस संगीत में किसी विशेष नियम का पालन न करना पड़े वह सुगम संगीत कहलाता है। इस संगीत का एक ही उदेश्य होता है कि यह कानों को मीठा लगे। इसमें हल्का-फुल्का बन्धन जैसे ताल, स्वर में गाना बजाना, आलाप, तान सरगम आदि कुछ भी प्रयोग किया जाए लेकिन यह संगीत हल्का व कर्णप्रिय होता है। यह संगीत केवल रंजकता पर निर्भर करता है। इसकी रंजकता को बढ़ाने के लिए कभी-कभी शास्त्रीय संगीत का सहारा भी ले लिया जा सकता है। कलाकार जनता के मनोरंजन के लिए मधुरमय गीतों की सरल रचना गाते हैं जो कि सबको आसानी से समझ में आ जाए और लोगों के मन को प्रसन्न कर सके एवं उन्हें आनन्द प्रदान कर सकें। स्वर रचना या गीत गाने में उसे किसी प्रकार के नियमों को सामने नहीं रखना पड़ता अपितु वह अपनी कला कुशलता से कोई भी स्वर प्रयोग कर सकता है, किसी भी ताल में गा सकता है। इस विधा के लिए यह अनिवार्य है कि गायक अथवा वादक कलाकार हर प्रकार की बंदिश को गाने-बजाने के लिए पारंगत् होना चाहिए कच्चा नहीं। शास्त्रीय संगीत का गायक-वादक इस क्षेत्र में इसी लिए विफल रहता है कि वह एक निर्धारित मार्ग पर चलने का आदि होता है, उसकी दिशा निश्चित होती है, उसका मूल स्वर 'सा' भी निश्चित रहता है। सुगम संगीत के क्षेत्र में कलाकार के लिए सर्जन का विस्तृत क्षेत्र है, इसमें विविधता अधिक है। उसे रागों की मर्यादा से हट कर ऐसे स्वर-समूह, स्वर-विन्यास ढूँढने होते हैं, जो प्रभावकारी हों, काव्य के अंतर्निहित भावों को उभारने में सक्षम हों।

सुगम संगीत के क्षेत्र में केवल तानपूरा ही नहीं अपितु अनेक वाद्यों का योगदान रहता है। अतः सुगम संगीत में कलाकार को यह आवश्यक है कि वह लगभग सभी वाद्यों के मिज़ाज को समझे। सुगम संगीत ऐसा संगीत है जिसमें कम समय में बहुत कुछ करके दिखाना होता है। इस लिए इस संगीत में पूर्णतया सक्षम कलाकार की आवश्यकता रहती है जो सीमित समय में अपनी सर्जन क्षमता का प्रभावकारी ढंग से प्रदर्शन कर सके।सुगम संगीत का भी आधार वही है जो शास्त्रीय संगीत का है। अर्थात् जब तक स्वर ज्ञान नही हो जाता तब तक सुगम संगीत का कलाकार भी नहीं बना जा सकता।

सुगम संगीत में तानों की आवश्यकता नहीं है, किन्तु गला और उँगलियाँ हर प्रकार के गीत के लिए हर समय तैयार रहनी चाहिए। इस संगीत में कलाकार के अन्दर चातुर्य की आवश्यकता होती है क्योंकि जो चीज़ सामने आए वह अपने-आप में पूर्ण हो, भावाभिव्यंजक हो, आकर्षक हो और जीवन्त भी। शास्त्रीय संगीत में शब्दों का अधिक महत्व नही होता अपितु राग की प्रधानता होती है। शब्दों का प्रयोग भी राग-विशेष को उभारने के लिए होता है जबकि सुगम संगीत में शब्दों को स्वरों के माध्यम से उभारा जाता है। यहाँ शब्दों की सार्थकता, काव्य का रसभाव मूर्त होता है। सुगम संगीत में नई-नई स्वरावलियों से काव्य का अंर्तनिहित भाव उभारा जाता है। इसमें रागाधार हो सकता है फिर भी यह संगीत राग से मुक्त रहता है। इस संगीत में काव्य के स्वरूप के अनुरूप ही स्वर-संयोजन किया जाता है।

सुगम संगीत के घराने नहीं होते फिर भी इसमें कुछ नियम होते हैं। जैसे- वास्तव में गायक के स्वर में तासीर होनी चाहिए, उसके लिए सुरीला होना ज़रूरी है। उसकी आवाज़ में लचीलापन होना चाहिए ताकि उसे स्वर टटोलने में कठिनाई न हो। कलाकार के गले में तीनों स्थानों में जाने की क्षमता होनी चाहिए। सुगम संगीत के लिए कलाकार में उच्चारण दोष नहीं होना चाहिए। अनुनासिक स्वर के दोष से मुक्त होना चाहिए।

शास्त्रीय संगीत की अपेक्षा सुगम संगीत में अनेक वाद्यों का वादन किया जाता है। जैसे हारमोनियम, सिंथेसाइज़र, तबला, ढोलक, काँगो, बाँगो, सारंगी इत्यादि। इस प्रकार सुगम संगीत नियमों में तो बंधा नही होता इसी लिए यह संगीत जन-साधारण में भी लोकप्रिय रहता है।

भारतीय संगीत को अलग-अलग भागों में विभाजित किया गया है। उन्हीं में से शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत भी आते हैं। कहा जाता हैकि शास्त्रीय संगीत की परम्परा चौथी शताब्दी से शुरू हुई। संगीत शास्त्रीयों ने शास्त्रीय संगीत की साधना करके इस नियमबद्ध संगीत को विकसित रूपप्रदान किया। कहने का तात्पर्य यह है कि जो संगीत शास्त्र के नियमों का पालन करके गाया-बजाया जाए, वही शास्त्रीय संगीत है। शास्त्रीय संगीत में उच्च विकसित साहित्यिक तत्व होते हैं। शास्त्रीय संगीत की स्वर-रचना, भाव, लय, ताल सभी में शास्त्रीय नियमों का पालन करते हुए ही गाना बजाना पड़ता है। शास्त्रीय संगीत सीखकर और अभ्यास करके ही गाया-बजाया जाता है।

इसी प्रकार सुगम संगीत भी संगीत का एक प्रकार के जिस संगीत में किसी विशेष नियम का पालन न करना पडे वह सुगम संगीत कहलाता है यह संगीत हल्का व कर्ण प्रिय होता है। कभी-कभी सुगम संगीत में शास्त्रीय संगीत का सहारा भी ले लिया जाता है। यह संगीत का एक ऐसा प्रकार है जिसमें कलाकार के लिए सर्जना करने का क्षेत्र विस्तृत होता है और इसमें वह अपनी कलाकारी दिखा सकता है। कुछ भी हो लेकिन संगीत के दोनों प्रकारों का मुख्य उदेश्य श्रोता को मनोरंजन प्रदान करना है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

6.1) नियमों मे बंधे संगीत को क्या कहा जाता है?

1) सुगम संगीत

2) शास्त्रीय संगीत

3) एक और दो (दोनों)

4) कोई नहीं

6.2 जिसमे नियम न के बराबर होते हैं वो कौन सा संगीत हैं ?

1) सुगम संगीत

2) शास्त्रीय संगीत

3) एक और दो (दोनों)

4) कोई नहीं

6.3 इनमे से शास्त्रीय गायक कौन सा है?

1) हंसराज रघुवंशी

2) श्रेया घोषाल

3) पंडित जसराज

4) कोई नहीं

6.4 इनमे से शास्त्रीय गायक कौन सा है?

1) उस्ताद राशीद खाँ

2) श्रेया घोषाल

3) सुनिधि चौहान

4) कोई नहीं

6.5 इनमे सा सुगम गायक कौन सा है?

1) उस्ताद राशिद खाँ

2) श्रेया घोषाल

3) पंडित जसराज

4) कोई नहीं

6.4 सारांश

रागों का समय सिद्धांत विषय भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इनके अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं।

6.5 शब्दावली

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।

- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

6.6 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

6.1) उत्तर: 2

6.2) उत्तर: 1

6.3) उत्तर: 3

6.4) उत्तर: 1

6.5) उत्तर: 2

6.7 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

6.8 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

6.9 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. सुगम संगीत विषय पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 2. शास्त्रीय संगीत विषय पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 3. शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत विषय पर विस्तृत प्रकाश डालें।

इकाई-7
नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर

इकाई की रूपरेखा

7.1	भूमिका
7.2	उद्देश्य
7.3	नाट्यशास्त्र ग्रथ का परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
7.4	बृहदेशी ग्रथ परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
7.5	संगीत रत्नाकर परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 3
7.6	सारांश
7.7	शब्दावली
7.8	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.9	संदर्भ
7.10	अनुशंसित पठन
7.11	पाठगत प्रश्न

7.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह सातवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रंथ का परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों के गूढ ज्ञान के लिए हमें उनसे जुड़े स्त्रोतों का अध्ययन करना पड़ता है। उन्हीं स्त्रोतों मे से चतुर्दण्डिप्रकाशिका और स्वरमेल कलानिधि ग्रथ भी एक हैं, जिनके अध्ययन से विद्यार्थी संगीत से जुड़ी किसी भी जानकारी को प्राप्त कर अपने संगीत ज्ञान मे वृद्धि कर सकता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रथ का विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर रागों के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात सितार के साथ सही व्यवहार करने मे समर्थ हो सकेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- नाट्यशास्त्र ग्रथ को गहनता से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।
- बृहदेशी ग्रथ को गहनता से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।
- संगीत रत्नाकर ग्रथ को गहनता से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।
- नाट्यशास्त्र ग्रथ के विभिन्न प्रकरणों से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।
- बृहदेशी ग्रथ के विभिन्न प्रकरणों से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।
- संगीत रत्नाकर ग्रथ के विभिन्न प्रकरणों से अध्ययन कर अपने ज्ञान मे वृद्धि कर सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रथ के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

7.3 नाट्य शास्त्र परिचय

स्वयं नाम से स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ नाटय पर लिखा गया है, किन्तु इसके अन्तिम 6 अध्यायों में 28 से 33 तक संगीत-शास्त्र का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ के लेखक हैं महर्षि भरत। इस नाम के कई प्रसिद्ध व्यक्ति हो चुके हैं, किन्तु नाटय शास्त्र के रचयिता भरत अन्य भरत से भिन्न हैं। इनके समय के विषय में विद्वानों में मतभेद है लेकिन सभी ने इनका समय 5वीं या छठी शताब्दी के लगभग माना है।

भरत ने नाटय शास्त्र के 28वें अध्याय में वाद्यों के प्रकार, श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्छना, जाति-भेद तथा उनके लक्षण ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औड़त्व, षाड़त्व आदि पर प्रकाश डाला है। 29वें अध्याय में विभिन्न प्रकार की वीणा, उनकी वादन विधि तथा जातियों के रसानुकूल प्रयोग का विवरण है। 30वें अध्याय में सुषिर वाद्यों का विवरण दिया गया है, 31वें अध्याय में कला, लय और विभिन्न तालों का वर्णन किया गया है। 32वें अध्याय में गायक-वादक के गुण, ध्रुव के 5 भेद, छन्द आदि तथा 33वें अध्याय में अवनद्ध वाद्यों की उत्पत्ति, भेद, वादन-विधि, वादकों के लक्षण आदि दिए गए हैं। इस प्रकार इन 6 अध्यायों में 28 और 29 अध्याय बड़े महत्वपूर्ण हैं, किन्तु इनके अतिरिक्त नाटयशास्त्र का छठा और सातवाँ अध्याय भी संगीत के लिए बड़ा महत्वपूर्ण है जिनमें रस सम्बन्धी बातों पर विवेचन है। छठे अध्याय में रस का लक्षण और व्याख्या, भाव-लक्षण और व्याख्या, आठों रसों का वर्णन, रस के देवता और वर्ण का वर्णन किया गया है। सातवें अध्याय में भाव, विभाव, अनुभाव आदि की व्याख्या, स्थाई, व्यभिचारी और सात्विक भावों का विवरण दिया गया है।

नाटयशास्त्र प्रथम उपलब्ध ग्रन्थ है जिसमें संगीत के आधारभूत तत्वों पर प्रकाश डाला गया है। इसके पूर्व के ग्रन्थों में केवल संगीत वाद्यों और संगीत उपमाओं का उल्लेख मिलता है। यह ग्रन्थ इस बात का प्रमाण है कि उस समय संगीत और नाटय का घनिष्ट सम्बन्ध था, अन्यथा संगीत पर पृथक रूप से विचार नही किया जाता। कई प्रमाणों से यह भी स्पष्ट

है कि भरत को संगीत का अच्छा ज्ञान था और उसे अपने कानों पर बड़ा विश्वास था। "सारणा चतुष्टई" प्रयोग का वर्णन करते समय उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा है, कि संवाद भाव को परखने के लिए मात्र प्रशिक्षित कान पर्याप्त हैं। गणित से कभी-कभी त्रुटि सम्भव है किन्तु प्रशिक्षित कानों से त्रुटि असम्भव है। भरत द्वारा बताई गई अधिकांश बातें आज भी अक्षरशः सत्य मानी जाती हैं।

भरत ने एक सप्तक के अन्तर्गत् 22 श्रुतियों और 7 शुद्ध स्वर माने हैं। प्रत्येक स्वर को उसकी अन्तिम श्रुति पर स्थापित किया है। सातों स्वरों की श्रुतियाँ क्रमशः इस प्रकार हैं 4. 3. 2. 4. 4. 3. 2 । आज भी इतने वर्षों के बाद स्वरों की इतनी ही श्रुतियों मानी जाती हैं। भरत ने केवल दो विकृत स्वर माने हैं. अन्तर गान्धार और काकली निषाद। इस प्रकार भरत के 9 स्वर 22 श्रुतियों पर इस प्रकार स्थापित हुए दूसरी श्रुति पर काकली निषाद, चौथी पर षड़ज, सातवीं पर रिषभ, नवीं पर गान्धार, 11वीं पर अन्तर गान्धार, 13वीं पर मध्यम, 17वीं पर पंचम, 20वीं पर धैवत और 22वीं श्रुति पर निषाद स्वर स्थापित किया। भरत ने नाटयशास्त्र में सम्वाद भाव पर बहुत बल दिया है। 9वीं अथवा 13वीं श्रुतियों पर सम्वादी और दो श्रुतियों पर विवादी स्वर का स्थान माना है। भरत ने मध्यम को आवश्यक स्वर माना है और उसे "अविलोपी स्वर" कहा है। सप्तक का कोई भी स्वर 'जाति' में वर्ज्य हो सकता था, किन्तु मध्यम नहीं। उन्होंने षड़ज और मध्यम ग्राम की विशेष रूप से व्याख्या की है, किन्तु गान्धार ग्राम को बिल्कुल छोड़ दिया है। इसके लिए उन्होंने लिखा है कि गन्धर्व लोगों के साथ यह भी लुप्त हो गया। इन्होंने नाटयशास्त्र में षड़ज और मध्यम ग्रामों से 18 जातियों की रचना स्वीकार की है और इस ग्रन्थ में जातियों की विस्तृत विवेचना की गई है। षड़ज ग्राम से 7 और मध्यम ग्राम से 11 जातियों की रचना मानते हुए जाति के दस लक्षण बताए गए हैं ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औड़त्य, षाड़त्व, मन्द्र और तार।

इस ग्रन्थ में भरत ने संगीत से सम्बन्धित हर पहलू का वर्णन किया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ संगीत का आधार ग्रन्थ माना जाता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

7.1 नाट्यशास्त्र किसके द्वारा लिखा गया है?

1) दत्तिल

2) भरत

3) मतंग

4) कोई नहीं

7.2 भरत ने कौन से ग्रथ की रचना की?

1) संगीत रत्नाकर

2) संगीत पारिजात

3) नाट्यशास्त्र

4) कोई नहीं

7.3 नाट्यशास्त्र के कौन से अध्याय मे सुषिर वाद्यों का वर्णन है?

1) 30वें

2) 31वें

3) 33वें

4) 32वें

7.4 भरत मे कितने विकृत स्वर मानें?

1) 3

2) 2

3) 7

4) कोई नहीं

7.4 बृहद्देशी परिचय

भरत के नाटयशास्त्र के पश्चात् मतंग मुनि द्वारा रचित ग्रन्थ बृहद्देशी महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसी ग्रन्ध में सर्वप्रथम देशी संगीत का निरूपण किया गया है और रागों की विस्तृत चर्चा भी की गई है। मतंग मुनि के समय के विषय में बहुत मतभेद माना जाता है। सिंहभूपाल ने मतंग को नाटय शास्त्र के रचयिता भरत के चार पुत्रों में से एक बताया है। इसी प्रकार मतंग द्वारा

रचित ग्रन्थ के रचना काल के विषय में भी कई मतभेद पाए जाते हैं। कुछ विद्वान इस ग्रन्थ का रचनाकाल पाँचवीं शताब्दी तो कुछ नवीं शताब्दी मानते हैं। लेकिन बहुत से विद्वान इस ग्रन्ध का रचनाकाल पाँचवीं से नवीं शताब्दी के मध्य मानते हैं। कहा जाता है कि नारद मुनि की आज्ञा से मतंग ने बृहद्देशी ग्रन्थ की रचना की थी। बृहद्देशी ग्रन्थ पूर्ण रूप से संगीत आधारित ग्रन्थ है इस लिए इसे संगीत का प्रथम ग्रन्थ माना जाता है। आज हमें जो बृहदेशी ग्रन्थ उपलब्ध होता है वह अपूर्ण तथा अनेक स्थानों पर खंडित है। अतः हमें उस ग्रन्थ में उपलब्ध जानकारी का पूर्ण रूप से पता नही चलता लेकिन प्रो० रामकृष्ण कवि के अनुसार बृहद्देशी के मूल पाठ में नाट्यशास्त्र की तरह ही छः हज़ार श्लोक तथा आठ अध्याय थे लेकिन अब जो इस ग्रन्थ का भाग उपलब्ध होता है उससे यह पता नही चलता कि इस ग्रन्थ में स्पष्ट रूप से कितने अध्याय थे। अपूर्ण और अव्यवस्थित होते हुए भी इस ग्रन्थ का संगीत के क्षेत्र में ऐतिहासिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में इस ग्रन्थ का संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान इस लिए भी है क्योंकि यह ग्रन्थ नाट्यशास्त्र के बाद संगीत की जानकारी देने वाला पहला ग्रन्थ है। क्योंकिनाट्यशास्त्र से लेकर नवीं शताब्दी तक संगीत का कोई और ग्रन्थ हमें उपलब्ध नहीं होता।

ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन :-

विद्वानों का मत है कि मतंग द्वारा निर्मित ग्रन्थ बृहद्देशी में कुल आठ अध्याय हैं लेकिन इस ग्रन्थ के कुछ अध्यायों के खंडित हो जाने के कारण अब केवल तीन ही अध्याय उपलब्ध होते हैं जो कि इस प्रकार हैं-

1 राघध्याय

2 स्वराध्याय

3 प्रबंध अध्याय

इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ के दो अध्याय, वाद्य अध्याय और नृत्याध्याय अप्राप्त हैं। कहा जाता है कि महाराणा कुम्भा को मतंग मुनि का वाद्याध्याय उपलब्ध था। अतः उन्होंने अपने ग्रन्थ संगीतराज में मतंग की किन्नरी वीणा का वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त मतंग ने इस ग्रन्थ में संगीत के अलग-अलग विषयों की चर्चा की है जैसे गान्धार ग्राम, द्वादश-स्वर

मूर्च्छना पद्धति, चौरासी मूर्छना तानें, जातियों की मूर्छनाएं इत्यादि। इसके अतिरिक्त मतंग ने बृहद्देशी में मार्गी संगीत के साथ-साथ देशी संगीत का भी वर्णन किया है।

इस ग्रन्थ की जो मुख्य बात है वह यह है कि इस ग्रन्थ में सबसे पहले राग शब्द का प्रयोग किया गया है। मतंग का कहना है कि भरत आदि आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में राग स्वरूप का वर्णन नहीं किया है। मतंग ने अपने ग्रन्थ में राग के लक्षणों का वर्णन किया है। मतंग और शारंगदेव नेजातियों और रागों से युक्त बंदिशों को जातियों और रागों का प्रस्तार कहा है। राग हमारे प्रचलित संगीत के प्राण हैं। बृहद्देशी में रागों के लक्षण और प्रस्तार से हमारे वर्तमान संगीत की कड़ी सहज ही प्राचीन संगीत से जुड़ती है। कहने का अर्थ यह है कि भरतकालीन जाति गायन विकसित होकर मतंग के समय में राग गायन के रूप में प्रचलित हो गया था। जैसा कि प्राचीन ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि सामवेद से स्वर, स्वर से ग्राम, ग्राम से मूर्च्छनाओं और मूर्छनाओं से जातियों की उत्पति हुई है। अतः जातियों का विकसित रूप ही राग कहलाया। मतंग ने ग्राम रागों के अतिरिक्त देशी रागों की भी चर्चा की है और वैसे भी इस ग्रन्थ के साथ देशी शब्द जुड़ा हुआ है। इस ग्रन्थ के आरम्भ में ही मतंग ने लिखा है कि -

"देशे-देशे प्रवृतेऽसौ ध्वनिर्देशीति संज्ञितः ।।"

अर्थात् भिन्न-भिन्न देशों एवं स्थानों में ध्वनि फैलती एवं प्रवृत होती है, इसलिए यह 'बृहद्देशी कहलाती है। स्त्रियाँ, बाल-गोपाल और राजा-महाराजा अपनी-अपनी इच्छानुसार अपने-अपने देश में जिसे अनुराग सहित गाते हैं, वह 'देशी' है। कहने का तात्पर्य यह है कि मतंग ने संगीत उपयोगी ध्वनि को देशी कहा है और साथ ही देशी ध्वनि से रचित जन-मन रंजक गीत को भी देशी कहा है तथा मतंग का मार्ग से तात्पर्य नियमबद्ध संगीत से था।

मतंग ने अपने ग्रन्थ बृहद्देशी में नाद के पाँच भेदों का वर्णन किया है जो कि इस प्रकार है- सूक्ष्म, अति सूक्ष्म, व्यक्त, अवयक्त और कृत्रिम। मतंग ने अपने ग्रन्थ में ग्राम और मूर्छना की विस्तृत परिभाषा दी है और गान्धार ग्राम का उल्लेख भी किया है। मतंग ने बृहद्देशी में सम्वादी स्वरों में 9 अथवा 13 श्रुतियों का अन्तर और विवादी स्वरों में 2 श्रुतियों का अन्तर माना है। इस ग्रन्थ में सामगायन के प्रारम्भिक तीन स्वरों के प्रयोग का भी वर्णन मिलता है। भरत के समय में राग शब्द का उल्लेख नही मिलता लेकिन मतंग के बृहद्देशी में राग शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है। उनके काल में

रागों का विकास बहुत संख्या में हो चुका था। उनके समय में जाति के सात प्रकार प्रचलित थे जिनमें से एक प्रकार 'राग जाति' का भी था। मतंग ने अपने ग्रन्थ में प्रचलित पाँच प्रकार की सांगीतिक रचनाओं का उल्लेख भी किया है। साथ ही अपनी ओर से दो और शैलियों का भी उल्लेख किया है। ये शैलियों है- शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, बेसरा, साधारणी तथा भाषा व विभाषा। इन शैलियों को इन्होंने गीति कह कर पुकारा। इन गीतियों के कुछ अवशेष आज भी हमारी राग परम्परा में विद्यमान हैं। प्राचीन गीति व्यवस्था में रागों के गमक भेद, स्थान भेद तथा लय भेद के वैज्ञानिक नियम आज भी रागों में पाए जाते हैं।

मतंग के बृहददेशी के समय से ही जाति गायन के स्थान पर राग गायन प्रचार में आ चुका था। मतंग ने अपनी जातियों के नाम भी भिन्न-भिन्न बताए हैं जैसे टकी, सावीरा, मालव पंचम, षाड़व, बट्टराग, हिंडोलक, टक्क कोशिका। मतंग ने रागों की उत्पत्ति जातियों से मानी है। उन्होंने रागों के मुख्य तीन भेद माने हैं - शुद्ध, छायालग और संकीर्ण। और इनका उल्लेख भी बृहद्देशी में किया है। इन्होंने जातियों के दस लक्षणों का भी वर्णन किया जो कि आज भी पूर्णतः मान्य हैं।

मतंग ने अपने ग्रन्थ में गान्धार ग्राम का भी उल्लेख किया है जबकि भरत ने नाट्यशास्त्र में गान्धार ग्राम को स्वर्ग स्थित वर्णित किया है। इसके अतिरिक्त मतंग ने बृहद्देशी में संगीत के विषय में पूर्व आचार्यों के मतों का भी उल्लेख किया है जैसे शार्दूल, तुमरू ऋषि, कोहल, विश्वावसु, विशाखिल, कश्यप तथा नन्दीकेश्वर इत्यादि।

इस प्रकार बृहद्देशी एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें अनेकों ऐसे विषयों का वर्णन किया गया है जो कि सबसे पहले बृहद्देशी में ही प्राप्त होते हैं। संगीत के क्षेत्र में नाट्यशास्त्र से लेकर संगीत रत्नाकर तक उनके बीच के समय की परम्परा को जानने के लिए बृहदेशी एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। संगीत के क्षेत्र में इस ग्रन्थ को अत्यन्त सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है।

नाम से स्पष्ट है कि नाटयशास्त्र ग्रन्थ नाटय पर लिखा गया है, किन्तु इसके अन्तिम 6 अध्यायों में 28 से 33 तक संगीत-शास्त्र का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ के लेखक हैं महर्षि भरत। इस ग्रन्थ को पंचन वेद कह कर भी पुकारा जाता है। इस ग्रन्थ में उस समय के संगीत के विषय में पूर्ण वर्णन मिलता है। इस ग्रन्थ में संगीत की कई ऐसी चीज़ों का वर्णन है जिसे आज तक भी ठीक उसी प्रकार माना जाता है। यह ग्रन्थ इस बात का प्रमाण है कि उस समय संगीत और नाटय का

घनिष्ट सम्बन्ध था, अन्यथा संगीत पर पृथक रूप से विचार नहीं किया जाता। जो भी हो यह ग्रन्थ हमारे संगीत का आधार ग्रन्थ माना जाता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

7.5 बृहदेशी ग्रथ किसके द्वारा लिखा गया है?

1) दत्तिल

2) मतंग

3) शारंग देव

4) कोई नहीं

7.6 मतंग ने कौन से ग्रथ की रचना की?

1) नाट्यशास्त्र

2) संगीत पारिजात

3) बृहदेशी

4) कोई नहीं

7.7 इस ग्रन्थ के कुछ अध्यायों के खंडित हो जाने के कारण अब ग्रथ मे कितने अध्याय हैं?

1) 3

2) 5

3) 1

4) 2

7.8 सबसे पहले राग शब्द का प्रयोग किस ग्रथ मे किया गया था?

1) संगीत रत्नाकर

2) बृहदेशी

3) नाट्यशास्त्र

4) कोई नहीं

7.5 संगीत रत्नाकर

पं० शारंगदेव कश्मीरी ब्राह्मण थे। इनके पिता श्री सोढल थे जिनके आश्रयदाता राजा भिल्लम थे। राजा भिल्लम के पश्चात् राजा सिंघण देवगिरी के राजा बने जिनका समय 1210 से 1247 माना जाता है। श्री सोडल ने इस गुणवान और गुणानुरागी राजा की छत्रछाया में अपने गुणों के कारण बहुत वैभव और सम्मान प्राप्त किया। इस गुणवान श्री सोढल के पुत्र पं० शारंगदेव भी योग्यता, विद्वता और बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। उपरोक्त विवरण के अनुसार पं० शारंगदेव का समय 13वीं शताब्दी माना जाता है।

पं० शारंगदेव देवगिरी (दौलताबाद) के राजा के दरवारी संगीतज्ञ थे। पं० शारंगदेव ने अनेक ग्रन्थों में बिखरी हुई सामग्री को एकत्र करके अपने लक्ष्य ज्ञान से उसे एक नया रूप देकर संगीत रत्नाकर' नामक ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ भी 'नाट्य शास्त्र की भान्ति दोनों संगीत पद्धतियों का आधार ग्रन्थ माना जाता है।

वैसे तो संगीत विषय पर इससे पहले भी कई ग्रन्थ लिखे गए थे परन्तु समय के परिवर्तन और राजनैतिक परिस्थितियों के प्रभाव स्वरूप वे ग्रन्थ उपलब्ध नही हो सके और संगीत सामग्री इधर-उधर बिखरी हुई थी। उस समय पं० शारंगदेव ने सम्पूर्ण संगीत सामग्री को एकत्र करके उसे 'संगीत रत्नाकर' नामक ग्रन्थ का रूप दे दिया। इन्होंने तर्कपूर्ण दृष्टि से संगीत के सिद्धान्तों का 'संगीत रत्नाकर में प्रतिपादन किया है। इन्होंने संगीत के अन्तर्गत्गायन, वादन और नृत्य तीनों का समावेश माना है और तीनों कलाओ का पूर्ण विवरण अपने ग्रन्थ में दिया है। इन्होंने अपने ग्रन्थ में मतंग से अधिक विवरण दिया है किन्तु सैद्धांतिक दृष्टि से मत लगभग एक सा है। इन्होंने भरत का भी अनुसरण किया है। इन्होंने नारद मुनि के सिद्धान्तों को स्वीकार कर ग्रामों के अन्तर्गत् षड्ज ग्राम, मध्यम ग्राम और गान्धार ग्राम का वर्णन किया है। इन्होंने वादी-सम्वादी स्वरों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध या अन्तर 13 या 9 श्रुति न मान कर 8 या 12 श्रुतियों का माना है। संगीत के महत्वपूर्ण ग्रन्थों की सूची में 'संगीत रत्नाकर एक महत्वपूर्ण कड़ी मानी जाती है।

9.1.2 यह ग्रन्थ मुख्य सात अध्यायों में बाँटा गया है :-

1. स्वराध्याय

2 राग विवेकाध्याय

3 प्रकीर्ण अध्याय

4. प्रबंध अध्याय

5. ताल अध्याय

6. वाद्य अध्याय

7. नृत्य अध्याय

सात अध्याय होने के कारण इस ग्रन्थ को 'सप्ताध्यायी' भी कहते हैं। इस ग्रन्थ में प्राचीन संगीत (गायन, वादन, नृत्य) का विस्तृत विवरण दिया गया है। इस ग्रन्थ के सात अध्यायों में जो वर्णन किया गया है वो इस प्रकार है :-

प्रथम अध्याय :-

संगीत रत्नाकर का पहला अध्याय 'स्वराध्याय' है इस अध्याय में ध्वनि की प्रकृति, ध्वनि की उत्पत्ति और उसके भेद, सरण चतुष्टय, ग्राम, मूर्छना, तन-निरूपण, स्वर और जाति साधारण, वर्ण, अलंकार और जाति का विस्तृत विवरण दिया गया है। शरणचतुष्टय प्रयोग के अंतर्गत भरत ने स्वर वीणा तथा शारंगदेव ने श्रुति वीणा पर प्रयोग किया। अत: भरत ने सात और शारंगदेव ने 21 तार बांधे थे। मूर्छना के अंतर्गत, उन्होंने सभी मूर्छनों को छह ग्रामों में बाँट दिया और प्रत्येक मूर्छना को छह ग्रामों से शुरू किया ताकि वे विकृत स्वरों का परीक्षण कर सकें। उनके समय तक केवल दो विकृत स्वरों पर ही विचार किया जाता था। उनकी आवाज़ों की विशेषता यह थी कि कोई भी आवाज़ अपनी जगह से हट जाने पर विकृत तो होता ही ठा, अपने स्थान पर रहते हुए भी अन्तराल अर्थात् श्रुत्यांतर होने पर भी विकृत हो जाता था। इन्होंने शुद्ध और विकृत कुल मिलाकर 12 स्वर माने हैं तथा भरत के समान 18 जातियाँ मानी हैं। अठारह जातियों के 13 लक्षण माने हैं जो कि इस प्रकार हैं- ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, सन्यास, विन्यास, अल्पत्य, बहुत्य, औड़त्व, षाड़त्व, मंद्र, तार और अन्तर्मार्ग। पं० शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर में 22 श्रुतियों का वर्णन किया है और वे स्वरों का पारस्परिक सम्बन्ध मालूम करने के लिए श्रुति का एक निश्चित प्रमाण स्वीकार कर अपनी 22 श्रुतियों को मानते हैं।

द्वितीय अध्याय :-

संगीत रत्नाकर का दूसरा अध्याय राग विवेकाध्याय' है। इसमें ग्रन्थकार ने जातियों से ग्राम राग, ग्राम राग से अन्य राग उत्पन्न होते हैं ये बताया है। ये एक ओर तो राग-रागिनी वर्गीकरण को मानते हैं और दूसरी ओर समस्त रागों को दस वर्गों में विभाजित करते हैं। ये वर्ग हैं-

राग नाम	संख्या
1. ग्राम राग	30
2. राग	20
3. उपराग	8
4. रागांग	8
5. भाषांग	21
6. उपांग	3
7. क्रियांग	12
8. भाषा	96
9. विभाषा	20
10. अंतरभाषा	4

इसमें ग्राम राग, राग, उपराग, भाषा, विभाषा और अंतरभाषा मार्गी संगीत के अन्तर्गत् आते हैं तथा रागांग, भाषांग, उपांग और क्रियांग देशी संगीत के अन्तर्गत् माने जाते हैं। इस ग्रन्थ में कुल 264 रागों का वर्णन मिलता है। इस वर्गीकरण से यह स्पष्ट होता है कि उस समय भरत की जातियाँ अप्रचलित हो गई थी।

तृतीय अध्याय :-

तीसरा अध्याय 'प्रकीर्णकाध्याय है। इस अध्याय के अन्तर्गत वाग्गेयकार, गायक और गीत के गुण-दोषों का वर्णन किया गया है। उन्होंने वाग्गेयकार के 28 गुणों का विवेचन किया है। इसके अतिरिक्त गायक के गुण-दोष का वर्णन किया है। इसी अध्याय के अन्तर्गत उन्होंने गीत की अच्छाई-बुराई अर्थात् एक गीत के क्या गुण या अवगुण होते हैं इनका वर्णन भी किया है।

छठा अध्याय:-

संगीत रत्नाकर का चौथा अध्याय 'प्रबन्धाध्याय है। इस अध्याय में पं० शारंगदेव ने प्रवन्ध विषय पर विचार किया है। इस अध्याय में मार्गी संगीत, देशी संगीत, निबद्धगान, अनिबद्धगान्, रागालाप, रूपकालाए, आलप्तिगान, स्वस्थान नियम का आलाप, अल्पत्व-बहुत्व पर प्रकाश डाला है। संक्षेप में कहा जाए तो इस अध्याय में गान के निबद्ध-अनिबद्ध भेद, धातु व प्रबन्ध के भेद तथा अंगों इत्यादि का वर्णन किया गया है।

पंचम अध्याय :-

इस ग्रन्थ का पाँचवां अध्याय तालाध्याय है। यह अध्याय तालों से सम्बन्धित है। इस अध्याय में उस समय के प्रचलित तालों का वर्णन किया गया है। इसमें 121 ताल आदि को मुख्य रूप से माना है।

षष्ठम अध्याय :-

'संगीत रत्नाकर का छठा अध्याय 'वाद्याध्याय' है। इस अध्याय में उन्होंने वाद्यों से सम्बन्धित चीज़ों का वर्णन किया है। उन्होंने समस्त वाद्यों को चार भागों में विभाजित किया तत्, सुषिर, अवनद्ध और घन। इसमें समस्त वाद्यों के भेद, वादन विधि, वाद्यों के गुण-दोष तथा वादकों के गुण-अवगुणों का वर्णन किया गया है।

सप्तम अध्याय :-

इस ग्रन्थ का सातवाँ अध्याय 'नर्तनाध्याय है। यह 'संगीत रत्नाकर का अन्तिम अध्याय है। इस अध्याय में नर्तन सम्बन्धी हर बात का वर्णन किया गया है। जिसमें नृत्य, नाट्य और नृत्य सम्बन्धी विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

इस प्रकार संगीत रत्नाकर नामक ग्रन्थ में हमें तत्कालीन संगीत की पूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है।

शारंगदेव ने यद्यपि अपने ग्रन्थ की नींव भरत के नाट्य शास्त्र' तथा मतंग के बृहद्देशी पर रखने की चेष्टा की है, परन्तु यह स्पष्ट है कि इनके समय में भरत की जातियाँ नष्ट हो चुकी थीं तथा मतंग के काल के देशी रागों के स्थान पर और अनेक रागों ने स्थान ले लिया था, जिन्हें 'अधुना-प्रसिद्ध राग' कहा जाता था। इसलिए शारंगदेव को इन अधुना-प्रसिद्ध रागों के विषय में ही कुछ कहना आवश्यक था परन्तु इन्हें अपने रागों का क्रम पीछे के सिद्धान्तों से भी जोड़ना था, इसलिए उन्होंने अपने रागों का सम्बन्ध पुराने रागों से और पुराने रागों का सम्बन्ध जातियों से जोड़ने का प्रयत्न किया है। परन्तु जातियों का पूर्ण लोप हो जाने के कारण यह सम्बन्ध सुचारू रूप से न जुड़ सका। यद्यपि शारंगदेव ने श्रुति, स्वर, ग्राम, जाति आदि के वर्णन में भरत का ही अनुकरण किया है, फिर भी इनकी पद्धति में प्रगति और विकास के लक्षणों का आभाव नही है। मूर्छनाओं की मध्य सप्तक में स्थापना, विकृत स्वरों की कल्पना, मध्यम ग्राम का लोप होना और प्रति मध्यम की उत्पत्ति इत्यादि 'संगीत रत्नाकर की मौलिकता को प्रकट करती है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

7.9 संगीत रत्नाकर किसके द्वारा लिखा गया है?

1) दत्तिल

2) शारंग देव

3) मतंग

4) कोई नहीं

7.10 शारंग देव ने कौन से ग्रथ की रचना की?

1) नाट्यशास्त्र

2) संगीत पारिजात

3) संगीत रत्नाकर

4) कोई नहीं

7.11 संगीत रत्नाकर के कौन से अध्याय मे वाद्यों का वर्णन है?

1) 6

2) 5

3) 1

4) 2

7.12 संगीत रत्नाकर मे कौन से अध्ययन मे ताल का वर्णन है?

1) 3

2) 5

3) 7

4) कोई नहीं

7.6 सारांश

नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रथ भारतीय शास्त्रीय संगीत के महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इन ग्रंथों के अध्ययन से संगीत से जुड़ी प्रमाणिक जानकारी प्राप्त कर विद्यार्थी स्वयं के ज्ञान मे बढ़ौतरी कर सकेंगे।

7.7 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।

- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।

7.8 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

7.1) उत्तर: 2

7.2) उत्तर: 3

7.3) उत्तर: 1

7.4) उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

7.5) उत्तर: 2

7.6) उत्तर: 3

7.7) उत्तर: 1

7.8) उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 3

7.9) उत्तर: 2

7.10) उत्तर: 3

7.11) उत्तर: 1

7.12) उत्तर: 2

7.9 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

7.10 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

7.11 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. भरत द्वारा रचित नाट्यशास्त्र ग्रंथ पर विस्तार से प्रकाश डालें।

प्रश्न 2. मतंग कृत बृहदेशी ग्रंथ पर विस्तार से प्रकाश डालें।

प्रश्न 3. शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर का संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों मे करे।

प्रश्न 3. नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रंथों का वर्णन अपने शब्दों मे करें।

इकाई- 8
भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन परिचय

इकाई की रूपरेखा

8.1	भूमिका
8.2	उद्देश्य
8.3	भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
8.4	सारांश
8.5	शब्दावली
8.6	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.7	संदर्भ
8.8	अनुशंसित पठन
8.9	पाठगत प्रश्न

8.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA103 की यह आठवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन का परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। रागों के वादी संवादी और अनुवादि स्वरों के साथ अगर सही न्याय किया जाए तो राग अनायास ही श्रोता को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन विषय एक ऐसा विषय है जिसके अध्ययन से विद्यार्थी स्वर चिन्हों का सही अध्ययन कर अपने ज्ञान मे बृद्धि कर सकता है।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन का इसका अर्थ समझ सकेंगे।
- भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन कर इनके द्वारा दिए स्वर प्रणाली के चिन्हों का अध्ययन सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

8.3 भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन परिचय

किसी गाने की कविता अथवा साजों पर बजाने की गत को स्वर और ताल के साथ जब लिखा जाता है, तब उसे स्वरलिपि कहते हैं। प्राचीनकाल में भारत में लगभग 250 ई० पूर्व अर्थात् पाणिनि के समय से पूर्व स्वरलिपि पद्धति

विद्यमान थी, किन्तु तब यह स्वरलिपि पद्धति अपने शैशव काल में थी। उस समय तीव्र और कोमल स्वरों के भेद तथा ताल-मात्रा-सहित स्वरलिपि नही होती थी अपितु केवल स्वरों के नाम उनके प्रथम अक्षरों के साथ सरगम के रूप में दिए जाते थे। उनसे केवल इतना ही बोध होता था कि अमुक गायन में अमुक स्वर प्रयोग हुए हैं।

तीव्र तथा कोमल स्वरों के चिन्ह न होने के कारण व ताल, मात्रा, मींड आदि के चिन्ह न होने के कारण उन स्वरलिपियों से संगीत विद्यार्थी लाभ उठाने में असमर्थ रहे। प्राचीन समय में स्वरलिपि पद्धति का विकास न होने के और भी कुछ कारण थे जो इस प्रकार हैं-

1. उस समय संगीत कला विशेषतया क्रियात्मक रूप में थी अर्थात् गुरु-मुख से सुनकर ही विद्यार्थी शिक्षा गहण किया करते थे।

2. लेखन प्रणाली व मुद्रण सम्बन्धी सुविधाएं उस समय आजकल जैसी नहीं थीं।

3. रागों को मौखिक अर्थात् जुवानी याद रखा जाता था।

4. संगीत कला गुरू से शिष्य को और शिष्य से उसके आगे शिष्यों को सिखाने या कण्ठस्थ कराने की प्रथा थी।

5. प्राचीन समय के उस्ताद अपनी कला को अपने पुत्र अथवा विश्वसनीय शिष्यों को भी लिखकर नही बताते थे, अपितु सामने बैठकर ही सिखाना पसंद करते थे।

स्वर एवं स्वर प्रणाली की व्याख्या:-

संगीत शिक्षा में दो पद्धतियाँ प्रमुख हैं। एक गुरू परम्परा पद्धति और दूसरी स्वरलिपि पद्धति। प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक प्रधानतया गुरू परम्परा शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी। इस शिक्षा प्रणाली में गुरू के सान्निध्य में शिष्य उपस्थित होकर संगीत की शिक्षा ग्रहण करते थे। किन्तु मध्यकाल के उपरान्त आधुनिक काल में स्वरलिपि पद्धति के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था की गई है। स्वरलिपि का स्थान संगीत शिक्षण में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्वरलिपि के आधार पर संगीत की शिक्षा अधिक वैज्ञानिक हो गई है। आजकल संगीत का जो अत्यधिक प्रचार-प्रसार हो रहा है, उसका एकमात्र कारण है स्वर-लिपि-मूलक संगीत शिक्षा की व्यवस्था।

जिस समय स्वरलिपि का प्रचार नही था, उस समय गुरू शिष्यों को मौखिक रूप से संगीत की शिक्षा देता था। शिष्य उसे कण्ठस्थ करता था और लय व ताल के साथ गेय पदों को गाया करता था। किन्तु इस शिक्षा प्रणाली में संगीत का अध्ययन सुविधाजनक नहीं होता था। गुरू अपने शिष्यों को एक बार जो बतलाता था उसका अभ्यास करने में शिष्यों को अत्यधिक समय लगाना पड़ता था। संगीत सीखने के बाद शिष्य को रागों के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता था। वे केवल गायन और वादन का प्रदर्शन करते थे किन्तु उन्हें रागों का शास्त्रीय ज्ञान उतना नहीं हो पाता था जितना आधुनिक काल में विद्यार्थियों को होता है। आधुनिक काल में स्वरलिपि के द्वारा संगीत सीखने में बहुत बड़ी सुविधा हो गई है। इसके द्वारा संगीत शिक्षक कम से कम समय में और एक ही साथ अधिक छात्रों को संगीत शिक्षा भली प्रकार दे सकता है। संगीत शिक्षक कक्षा में सर्वप्रथम छात्रों को गीतों की स्वरलिपि लिख देता है। उसके पश्चात् वह स्थाई और अन्तरा की एक-एक पंक्ति के स्वरों तथा स्वरांकित शब्दों को क्रमशः बोलता जाता है। छात्र उसका अनुकरण करते हैं। सीखते समय छात्रों को इस बात का ज्ञान रहता है कि गीत के प्रत्येक शब्द में किन-किन स्वरों का प्रयोग होता है। उन्हें ये भी ज्ञात हो जाता है कि स्थाई और अन्तरा के प्रत्येक अवयव में किन-किन स्वरों पर कम और किन-किन स्वरों पर अधिक विश्राम किया जाता है। स्वरलिपि का आश्रय न लेने पर गायक जितनी बार उन गेय पदों की पक्तियों को दुहराता है उतनी बार वह स्वरों के ठहराव में अन्तर उत्पन्न करता जाता है। इस विषमता से गायन और वादन में वैज्ञानिकता नही आने पाती। किन्तु स्वर लिपि के आधार पर जो संगीत सिखाया जाता है वह अत्यधिक वैज्ञानिक होता है।

सरगम, लक्षण-गीत, गीत, ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी और तराना आदि जितनी गीत-शैलियाँ प्रचलित हैं, उन सब की शिक्षा स्वरलिपि के आधार पर दी जाती है। स्वरलिपि से अध्ययन और अभ्यास में सबसे बड़ी सुविधा यह है कि किसी एक गीत शैली का सम्यग् अध्ययन और अभ्यास होने से उस शैली के अन्तर्गत जितने गीत होते हैं, उनके सीखने में विशेष श्रम और समय की अपेक्षा नहीं होती। छात्रों में गाने और बजाने की अभूतपूर्व क्षमता उत्पन्न होती है। स्वरलिपि के माध्यम से संस्थागत संगीत शिक्षा की सुव्यवस्था के साथ-साथ व्यक्तिगत संगीत-शिक्षा में विशेष लाभ पहुँचता है। अधिकांश छात्र अपने निवास स्थान पर स्थित होकर बिना किसी शिक्षक की सहायता लिए हुए संगीत कला का अध्ययन करते हैं। स्वरलिपि का क्षेत्र व्यापक और विस्तृत है। स्वर लिपि के अन्तर्गत शुद्ध और विकृत 12 स्वरों, तालों और मात्राओं के ज्ञान के लिए सांकेतिक चिन्ह निर्धारित किए गए हैं। उन चिन्हों के आधार पर संगीत के

प्रारम्भिक अध्ययन के पश्चात् कोई भी छात्र सरलता और सुगमता पूर्वक संगीत का अध्ययन और अभ्यास कर सकता है। स्वरलिपि के माध्यम से संगीत की शिक्षा प्राप्त करने वाला छात्र दूसरों को सुविधा के साथ संगीत की शिक्षा दे सकता है। अपना विचार और भाव प्रकट करने के लिए जैसे भाषा की आवश्यकता होती है, वैसे ही विभिन्न गायन और वादन शैलियों की अभिव्यक्ति के लिए स्वरलिपि की अत्यन्त आवश्यकता है।

स्वरलिपि से सबसे बड़ा लाभ यह है कि छात्रों में किसी भी राग में गीतों को सम्बद्ध करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त एक और महत्वपूर्ण लाभ यह है कि किसी महान संगीतज्ञ की बन्दिश का तत्तकाल ज्ञान होता है। स्वरलिपि का आश्रय न लेने से उस बन्दिश को सर्वप्रथम कण्ठस्थ करना पड़ता है। कण्ठस्थ करने के बाद उसका अभ्यास करना पड़ता है। इन समस्त प्रकियाओं में पर्याप्त श्रम तथा समय की अपेक्षा होती है। किन्तु जिस छात्र को स्वरलिपि का अच्छा ज्ञान होता है वह तत्तकाल बन्दिश को सुन कर उसे स्वरबद्ध कर लेता है। बन्दिश को सुनकर उसे स्वरांकित करने के बाद छात्र कालान्तर में उसका अनुकरण और अभ्यास करके उस बन्दिश को उसी प्रकार प्रस्तुत कर सकता है। इस प्रकार कम से कम समय और श्रम में स्वरलिपि के द्वारा वह वस्तु प्राप्त हो जाती है जो महीने भर श्रम करने पर भी साध्य नहीं होती। बन्दिशों के अतिरिक्त महान संगीतज्ञों के तान लेने का ढंग अलग होता है। उनकी तानों में जो वैचित्रय पाया जाता है वह प्रभावोत्पादक और आकर्षक होता है। ऐसी तानों का मौखिक रूप से याद करना साधारण कार्य नही है। तत्तकाल उन तानों का प्रभाव हृदय पर भले ही हो जाता है लेकिन बाद में उन्हें याद नहीं रखा जा सकता। अतः स्वरलिपि के द्वारा उनकी रोचक और आकर्षक तानों को सुनकर लिपिबद्ध कर लेने से वह याद भी की जा सकती हैं और ताने सर्वकालिक हो जाती है। आगे चलकर किसी भी समय इन लिपिबद्ध तानों का प्रयोग किया जा सकता है।

गायन में बोलतानों का बहुत अधिक महत्व है। टप्पा तथा ठुमरी आदि बहुत सी भाव प्रधान गीत शैलियों ऐसी हैं. जिनमें बोल-आलापों और बोल-तानों की बहुलता पाई जाती है। इन गीतों में बोलतानों और बोल-आलापों से ही रोचकता, आकर्षण और चमत्कार की अभिवृद्धि होती है। अतः बोल-आलापों और बोलतानों का अध्ययन और अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। इनका अध्ययन और अभ्यास एकमात्र स्वरलिपि के माध्यम से ही सम्भव है।

आधुनिक काल में संगीत का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत एवं व्यापक हो गया है। अनेक नए-नए रागों और तालों का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त संगीत के सिद्धान्त पक्ष और क्रियात्मक पक्ष पर बड़े-बड़े शोधकार्य किए जा रहे हैं। संगीत

की उच्चतम कक्षाओं में अप्रचलित तथा मिश्र रागों का अध्ययन और अध्यापन किया जाता है। संगीत विद्या का भण्डार अनन्त है। कोई भी संगीतज्ञ इस बात का दावा नही कर सकता कि वह सभी रागों के प्रदर्शन में पारंगत है। महान से महान संगीतज्ञों का कुछ सीमित रागों पर ही अधिकार होता है। किन्तु जब उन्हें किसी मिश्र या अप्रचलित रागों को सिखाने की आवश्यकता पड़ती है तो वे स्वरलिपि का सहारा लेते हैं। जिन रागों से संगीतज्ञ अपरिचित रहता है, उनको भी वह स्वरलिपि के द्वारा सीखा सकता है। क्रियात्मक तथा शास्त्रीय सिद्धांतों पर बड़े-बड़े संगीताचार्यों ने अनेक ग्रंथों की रचना की है। उन ग्रंथों में अनेक मिश्र तथा अप्रचलित रागों में निबद्ध ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी तथा तरानों का उल्लेख रहता है। गायक अथवा वादक इन ग्रंथों में दिए गए स्वरलिपि बद्ध रागों का सुगमता के साथ अध्ययन एवं अभ्यास कर संगीत शिक्षण-कला को अत्यन्त सुगम बना सकते हैं।

अतः स्वरलिपि पद्धति का अनुसरण न करने से गायक अथवा वादक उन्हीं रागों और गीतों को सीखाने में सक्षम हो सकता है जिनका अध्ययन व अभ्यास वह पहले कर चुका है लेकिन उन गीतों और रागों को सिखाने में वह अस्मर्थ रहता है जिनका उसे अभ्यास और जानकारी नही होती। किन्तु स्वरलिपि एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा उपरोक्त कठिनाइयों का समाधान तुरन्त हो जाता है।

विद्यार्थियों के लिए सुबोध और सरल स्वरलिपि का निर्माण आज से लगभग 90-100 वर्ष पूर्व हुआ। वर्तमान समय में स्वरलिपि का बहुत अधिक महत्व है। भारत में लगभग पिछले कई वर्षो से स्वरलिपि का विकसित और वैज्ञानिक रूप सामने आया है। आधुनिक समय में दो स्वरलिपियों हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में मानी जाती हैं- विष्णुदिगम्बर स्वरलिपि पद्धति और भातखण्डे स्परलिपि पद्धति। इन पद्धतियों का नामकरण इनके जन्मदाताओं के नाम पर हुआ है।

उन्नसवीं शाताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में संगीत की बहुत बुरी दशा थी। एक और संगीत वेश्याओं के हाथ लग चुका था और दूसरी ओर रहे-सहे उस्ताद जल्दी किसी को संगीत की शिक्षा नहीं देते थे। संगीत धीरे-धीरे साधारण जनता से दूर होता जा रहा था। संगीत और साधारण जनता के बीच की इस दूरी को दूर करने का प्रण पं० विष्णुदिगम्बर और पं० विष्णुनारायण भातखण्डे ने लिया। इसके लिए पं० विष्णु दिगम्बर ने देश-देश घूम कर संगीत का प्रचार किया और संगीत को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए एक स्वरलिपि पद्धति का आविष्कार किया।

दूसरी ओर भातखण्डे जी ने यह देखा कि उस्ताद लोग केवल एक बन्दिश भी बहुत मुश्किल से सिखाते थे। उन्होंने यह अनुमान लगाया कि अगर भविष्य में संगीत की ऐसी ही दशा रही तो इससे बड़ी हानि होगी। अतः उन्हें बन्दिशों को स्वरलिपि बद्ध कर उन्हें पुस्तक रूप प्रदान करने की तीव्र आवश्यकता अनुभव हुई। कहते भी हैं कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है। अतः उनके द्वारा एक नवीन स्वरांकन पद्धति अर्थात् स्वरलिपि पद्धति का जन्म हुआ।

भातखण्डे तथा विष्णुदिगम्बर जी ने संगीत के उत्थान तथा विकास के लिए और संगीत को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए एक साधारण स्परलिपि पद्धति का आविष्कार किया। भातखण्डे जी ने सैंकड़ों स्थानों का भ्रमण किया और बड़े-बड़े गायकों का संगीत सुना और उसकी स्वरलिपि तैयार करके "हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिका" के नाम से एक ग्रंथ माला प्रकाशित की जिसके छः भाग हैं और इसके द्वारा संगीत को लोगों में लोकप्रिय बनाया।

भातखण्डे में स्वर लिपि विधि :-

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में स्वरों, सप्तक के स्वरों, मात्राओं इत्यादि के अलग-अलग चिन्ह बताएं हैं। जिनसे संगीत सम्बन्धी विशेषताओं को समझने में सुगमता आ गई है। भातखण्डे स्वरलिपि में प्रयुक्त होने वाले चिन्ह निम्नलिखित हैं-

1. मध्य सप्तक के लिए कोई चिन्ह प्रयोग नही होता।

2. मन्द्र सप्तक के लिए स्वर के नीचे बिन्दु लगाया जाता है। जैसे "सा़" (स्वर के नीचे बिन्दु)

3. अति मंद्र सप्तक के लिए स्वर के नीचे दो बिन्दु लगाए जाते हैं। जैसे- 'सा़' (स्वर के नीचे दो बिंदु)

4. तार सप्तक के लिए स्वर के ऊपर बिन्दु लगाया जाता है। जैसे "सां" (स्वर के ऊपर बिन्दु)

5. अति तार सप्तक के लिए स्वर के ऊपर दो बिन्दु लगाए जाते हैं। जैसे "सां" (स्वर के ऊपर दो बिंदु)

6. शुद्ध स्वर के लिए कोई चिन्ह प्रयोग नही किया जाता है। जैसे "सा रे" आदि। (कोई चिन्ह नहीं।)

7. कोमल स्वर के लिए स्वर के नीचे एक सीधी रेखा खींची जाती है। जैसे "रेगध नि"।,।

8. तीव्र स्वर को दर्शाने के लिए स्वर के ऊपर एक खड़ी रेखा खींची जाती है। जैसे- "म"।

9. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में गायन-वादन के अन्तर्गत यदि किसी स्वर को बढ़ाना होता है अर्थात अधिक देर तक बोलना होता है तो स्वर के आगे एक सीधी रेखा खींची जाती हैं। जैसे- " सा - ग- प" इत्यादि।

10. यदि स्वरलिपि में किसी शब्द या बोल के आगे अवग्रह का चिन्ह जितनी बार लगा हो उसे उतनी ही मात्राओं तक गाया अथवा बजाया जाता है। जैसे- राSSSI

11. यदि स्वर एक-दूसरे से सटा कर लिखे गए हों तो इसका अर्थ है कि इन सभी स्वरों को एक मात्रा काल में गाया-बजाया जाएगा। जैसे- 'मधप"। इसी प्रकार यदि स्वरों को एक कोष्ठक अथवा ब्रेकिट में लिखा गया हो तो उन्हें भी एक मात्रा में ही गाया-बजाया जाएगा। जैसे-मधप ।

इसी प्रकार भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में संगीत में प्रयोग की जाने वाली ताल पद्धति के भी कुछ चिन्ह निर्धारित किए गए हैं। जिनका अध्ययन करके गायक तथा वादक किसी भी बन्दिश की स्वरलिपि तैयार कर सकते हैं। साथ ही किसी गीत या बन्दिश की स्वरलिपि को पढ़ कर उसका गायन-वादन कर सकते हैं।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में ताल के लिए प्रयुक्त होने वाले चिन्ह इस प्रकार हैं-

1. सम के लिए "काटे" का चिन्ह प्रयोग किया जाता है। जैसे- (x)

2. खाली मात्रा को दर्शाने के लिए शून्य का चिन्ह प्रयोग किया जाता है। जैसे- (0)

3. ताल में ताली को दर्शाने के लिए गिनती का प्रयोग किया जाता है। जैसे- (1234)

4. एक ही मात्रा के स्वरों अथवा आपस में सटे हुए सभी स्वरों के बीच में लगा हुआ "कौमा" या "अल्प विराम चिन्ह एक मात्रा को, आधी-आधी मात्रा के दो खण्डों में विभाजित करता है। जैसे (सारे सा)

5. स्वरलिपि में जहाँ-जहाँ फूल के आकार का चिन्ह बना हो वहाँ गायन-वादन करते समय उतनी ही देर चुप रहना चाहिए। जैसे- (०० घर०००० आ)।

इसी प्रकार भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में गायन-वादन में प्रयुक्त होने वाली चीज़ों जैसे मींड, गमक, कण इत्यादि दर्शाने के लिए भी कुछ चिन्ह तैयार किए गए हैं। जिनका प्रयोग करने से गायक-वादक अपने संगीत में मधुरता ला सकते हैं। ये चिन्ह इस प्रकार हैं-

1. जब स्वरों के ऊपर उल्टी ब्रकिट अथवा अर्धचन्द्र बना हो तो उसे "मींड" कहते हैं। जैसे धग

2. इसी प्रकार यदि किसी स्वर के ऊपर दूसरा स्वर लिखा गया हो तो उसका अर्थ है कि उस ऊपर वाले स्वर को छूते हुए निचले स्वर पर आया जाए। ऐसे स्वरों को "कण" स्वर कहते हैं। जैसे -

गप रे गप

3. यदि कोई स्वर कोष्ठक में बंद हो तो उसका अर्थ यह है कि उस स्वर के आगे का स्वर, वह स्वर, उससे पहले का स्वर और फिर वहीं स्वर इकट्ठे एक ही मात्रा में गाए बजाए जाएं। जैसे (म) स्वर होंगे (पमगम)

4. यदि स्वरों के ऊपर हिलती हुई रेखा का बिन्ह है तो संतुलित ढंग से हिलाते हुए गाया-बजाया जाए। जैसे गमक लेना कहते हैं। उसका अर्थ है कि उन स्वरों को मधुरता व गगममपय। इसे जमजमा अथवा कम्पन्न या गमक लेना कहते हैं।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति के लाभः-

1. संगीत सर्व साधारण के लिए सुलभ हो सका।

2. स्कूल, कालेजों और विश्वविद्यालयों में संगीत एक विषय बनाया जा सका।

3. स्वरलिपि पद्धति के कारण किसी बंदिश की मूल रचना में कई वर्षों बाद भी कोई मूल होने की सम्भावना नहीं रही।

4. संगीत में अन्य विषयों की तरह परीक्षा में मुद्रित प्रश्न पूछे जा सके और उनका उत्तर लिखना सम्भव हो सका।

5. स्वरलिपि द्वारा संगीत शिक्षण में सुविधा हो गई। पहले की तरह बंदिश को बार-बार रटाने की आवश्यकता नही रही। अब शिक्षक एक-दो बार बंदिश याद करा कर उत्तकी स्वरलिपि विद्यार्थी को दे देता है और विद्यार्थी उसे घर पर अभ्यास करके याद कर लेता है।

इस प्रकार भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का हमारे संगीत में एक विशिष्ट स्थान है। यह पद्धति संगीत विद्यार्थियों, संगीत अध्यापकों के लिए ही नहीं अपितु संगीत से सम्बन्धित जनसाधारण के लिए भी उपयोगी है।

विष्णुदिगम्बर स्वरलिपि विधि :-

इसी प्रकार पं० विष्णुदिगम्बर पलुस्कर जी ने भी कई पुस्तकें रची और एक नई स्वरलिपि पद्धति का आविष्कार किया। पलुस्कर जी की स्वरलिपि पद्धति जो प्रारम्भ में उनके द्वारा शुरू की गई उसमें अब कुछ परिवर्तन हो गए हैं। यही कारण है कि विष्णु दिगम्बर जी की प्रारम्भिक मूल पुस्तकों में और आज की कुछ पुस्तकों में स्वरलिपि के चिन्हों में काफी अन्तर पाया जाता है।

पं० विष्णु दिगम्बर द्वारा रचित स्वरलिपि पद्धति के स्वरलिपि चिन्ह इस प्रकार हैं :-

1. जिन स्वरों के ऊपर-नीचे कोई चिन्ह नहीं होता, वे मध्य सप्तक के शुद्ध स्वर माने जाते हैं जैसे- सा रेगमप।

2. जिन स्वरों के नीचे हलन्त का निशान होता है, उन्हें कोमल या विकृत स्वर मानते हैं जैसे.रे ग़ ध़ नि़।

3. तीव्र या विकृत मध्यम को उल्टे हलन्त द्वारा इस प्रकार दिखाते हैं- म/।

4. ऊपर बिंदी वाले स्वर मन्द्र सप्तक के माने जाते हैं जैसे पं धं निं।

5. जिन स्वरों के ऊपर खड़ी लकीर होती है, वे तार सप्तक के स्वर होते हैं जैसे- सा रे ग म

6. स्वर पर मात्राओं के लिए इस प्रकार के चिन्ह बताए गए हैं:-

+ चार मात्रा, जैसे सा (सा के नीचे जमा का चिन्ह) +

सा
+

- ऽ दो मात्रा, जैसे सा (सा के नीचे अवग्रह के समान चिन्ह)

- एक मात्रा, जैसे सा (सा के नीचे एक सीधी रेखा)

० आधी मात्रा, जैसे सा (सा के नीचे शून्य का चिन्ह)

1/4 मात्रा, जैसे प (प के नीचे एक अर्ध चन्द्र)

1/8 मात्रा, जैसे म (म के नीचे दो अर्ध चन्द्र)

7. स्वरों को लम्बा करने के लिए अवग्रह (ऽ) का प्रयोग करते हैं और गीत के अक्षरों के ठहराव को लम्बा करने के लिए बिन्दु (•) का प्रयोग करते हैं। जैसे गऽऽ प और राम।

8. स्वरों के नीचे 1/3 या 1/6 लिखा हो तो उसका अर्थ है कि एक मात्रा में 3 या 6 स्वर बोले जाते हैं।

9. किसी स्वर के ऊपर यदि कोई दूसरा स्वर लिखा हो तो उसे कण स्वर के रूप में प्रयुक्त करते हैं। 10. ताल के सम के लिए १ का चिन्ह लगाते हैं, खाली के लिए + का चिन्ह प्रयोग किया जाता है तथा अन्य तालियों के लिए गिनती के चिन्ह प्रयोग किए जाते हैं।

5.4 भातखंडे स्वर प्रणाली और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणाली के बीच अंतर:-

जहाँ एक ओर पं० विष्णुदिगम्बर जी को स्वरलिपि पद्धति का प्रथम अन्वेषक माना गया है वहीं दूसरी और यह कहना अनुचित न होगा कि आधुनिक युग में पं० भातखण्डे भी संगीत के उत्थान तथा स्परलिपि तैयार करने वाले अद्वितीय विद्वान व संगीत षास्त्री हुए हैं। उन्होंने स्वरलिपि पद्धति का विकास करके एक महान कार्य किया। पं० भातखण्डे द्वारा निर्मित स्वरलिपि पद्धति, पं० विष्णुदिगम्बर द्वारा रचित स्वरलिपि पद्धति से अधिक सरल है। इस सरल स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत शिक्षा और संगीत प्रचार दोनों को बहुत प्रोत्साहन मिला है। इस स्वरलिपि द्वारा पढ़े-लिखे आम लोगों में भी संगीत ज्ञान को बढ़ाने के लिए बहुत सहायता मिली। इस स्वरलिपि पद्धति से संगीत शिक्षा के लिए और अधिक आसानी हो गई। इस प्रकार पं० भातखण्डे जी तथा पं० विष्णुदिगम्बर जी ने आधुनिक संगीत निर्माण में तथा विशेषकर स्वरलिपि पद्धति के निर्माण में महान कार्य किया है। जिससे कि संगीत जगत में इनके नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाएंगे।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति, पं० विष्णुदिगम्बर स्वरलिपि पद्धति से अधिक सरल और आसानी से समझने

योग्य है।

किसी गाने की कविता अथवा साजों पर बजाने की गत को स्वर और ताल के साथ जब लिखा जाता है, तब उसे स्वरलिपि कहते हैं। प्राचीनकाल में भारत में लगभग 250 ई० पूर्व अर्थात् पाणिनि के समय से पूर्व स्वरलिपि पद्धति विद्यमान थी, किन्तु तब यह स्वरलिपि पद्धति अपने शैशव काल में थी। उस समय तीव्र और कोमल स्वरों के भेद तथा ताल-मात्रा-सहित स्वरलिपि नही होती थी अपितु केवल स्वरों के नाम उनके प्रथम अक्षरों के साथ सरगम के रूप में दिए जाते थे। उनसे केवल इतना ही बोध होता था कि अमुक गायन में अमुक स्वर प्रयोग हुए हैं।

संगीत शिक्षा में दो पद्धतियाँ प्रमुख हैं। एक गुरू परम्परा पद्धति और दूसरी स्वरलिपि पद्धति। प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक प्रधानतया गुरू परम्परा शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी। इस शिक्षा प्रणाली में गुरु के सान्निध्य में शिष्य उपस्थित होकर संगीत की शिक्षा ग्रहण करते थे। किन्तु मध्यकाल के उपरान्त आधुनिक काल में स्वरलिपि पद्धति के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था की गई है। स्वरलिपि का स्थान संगीत शिक्षण में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्वरलिपि के आधार पर संगीत की शिक्षा अधिक वैज्ञानिक हो गई है। आजकल संगीत का जो अत्यधिक प्रचार-प्रसार हो रहा है, उसका एकमात्र कारण है स्वर-लिपि-मूलक संगीत शिक्षा की व्यवस्था।

स्वरलिपि से सबसे बड़ा लाभ यह है कि छात्रों में किसी भी राग में गीतों को सम्बद्ध करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त एक और महत्वपूर्ण लाभ यह है कि किसी महान संगीतज्ञ की बन्दिश का तत्तकाल ज्ञान होता है। आधुनिक समय में दो स्वरलिपियाँ हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में मानी जाती हैं- विष्णुदिगम्बर स्वरलिपि पद्धति और भातखण्डे स्परलिपि पद्धति। इन पद्धतियों का नामकरण इनके जन्मदाताओं के नाम पर हुआ है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

8.1 भातखण्डे स्वर लिपि मे मंद्र सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे बिन्दु

2) स्वर के पीछे बिन्दु

3) स्वर के आगे बिन्दु

4) कोई नहीं

8.2 भातखण्डे स्वर लिपि मे मध्य सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे बिन्दु

2) स्वर के पीछे बिन्दु

3) स्वर के आगे बिन्दु

4) कोई नहीं

8.3 भातखण्डे स्वर लिपि मे तार सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे बिन्दु

2) स्वर के पीछे बिन्दु

3) स्वर के ऊपर बिन्दु

4) कोई नहीं

8.4 भातखण्डे स्वर लिपि मे तीव्र स्वर के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे खड़ी रेखा

2) स्वर के ऊपर खड़ी रेखा

3) स्वर के पीछे खड़ी रेखा

4) कोई नहीं

8.5 पं० विष्णु दिगम्बर स्वर लिपि मे मंद्र सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे बिन्दु

2) स्वर के पीछे बिन्दु

3) स्वर के ऊपर बिन्दु

4) कोई नहीं

8.6 पं० विष्णु दिगम्बर स्वर लिपि मे मध्य सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के नीचे बिन्दु

2) स्वर के पीछे बिन्दु

3) स्वर के आगे बिन्दु

4) कोई नहीं

8.7 पं० विष्णु दिगम्बर में स्वर लिपि मे तार सप्तक के लिए चिन्ह क्या है?

1) स्वर के ऊपर खड़ी रेखा

2) स्वर के ऊपर तिरछी रेखा

3) स्वर के ऊपर आड़ी रेखा

4) कोई नहीं

8.8 पं० विष्णु दिगम्बर स्वर लिपि मे तीव्र स्वर के लिए चिन्ह क्या है?

1) सीधी हलंत

2) तिरछी हलंत

3) उल्टी हलंत

4) कोई नहीं

8.4 सारांश

भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ताल के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है और शास्त्रीय संगीत से संबंधित ज्ञान मे बृद्धि होगी।

8.5 शब्दावली

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।

- लय (Lay): संगीत के समान गति को लय कहते हैं, संगीत में लय अत्यंत महत्पूर्ण हैं, लय के बिना संगीत की कल्पना भी करना असंभव हैं।
- मात्रा (Matra): ताल की इकाई को मात्रा कहते हैं।
- ताली (Taali): सम के अलावा अन्य विभागों की पहली मात्रा पर जहाँ हथेली पर दुसरे हाथ की हथेली के आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न की जाती है, उसे ताली कहते हैं।
- खाली (Khali): ताल देते समय जहाँ विभाग की प्रथम मात्र पर ध्वनि न करके केवल हाथ हिलाकर इशारा कर देते हैं, उसे 'खाली' कहते हैं. अधिकतर खाली ताल के बीच की मात्र अथवा उसके आस पास हीं कहीं पड़ती है।
- विभाग (Vibhag): ताल को कुछ निश्चित मात्राओं में बांटना जिससे भरे एवं खाली जगहों का पता लगे उसे विभाग कहते हैं

8.6 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.1) उत्तर: 1

8.2) उत्तर: 4

8.3) उत्तर: 3

8.4) उत्तर: 2

8.5) उत्तर: 3

8.6) उत्तर: 4

8.7) उत्तर: 1

8.8) उत्तर: 3

8.7 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2002). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

8.8 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

8.9 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन कर विस्तार से प्रकाश डालें।

इकाई-9
ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना

इकाई की रूपरेखा

9.1	भूमिका
9.2	उद्देश्य
9.3	ताल परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
9.4	तीन ताल मे रचित राग भिन्न षड़ज मे रचना
	स्वयं जांच अभ्यास 2
9.5	सारांश
9.6	शब्दावली
9.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
9.8	संदर्भ
9.9	अनुशंसित पठन
9.10	पाठगत प्रश्न

9.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA201 की यह नौवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना एवं इसका विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। लेकिन राग के साथ अगर ताल न हो तो ऐसे संगीत की तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं तो उन्हें राग के साथ ताल का भी उतना ही ज्ञान होना चाहिए जितना कि राग का । गायन या वादन का अभ्यास अगर ताल के साथ किया जाए तो ताल मे पकड़ तो आती ही है, साथ ही प्रस्तुति मे भी चार चाँद लग जाते हैं। इसलिए ताल मे लिखी हुई नॉटेशन समझने के लिए इस विषय का अध्ययन बहुत आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी , ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना विषय का अर्थ परिभाषा और ताल की एकगुण, दुगुण और तीनगुण के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही गायन या सितार वादन पर ताल के साथ अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता परिपक्क्वता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात स्वयं ताल को समझने और ताल के साथ न्याय करने में समर्थ हो सकेंगे।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- ताल का अर्थ समझ सकेंगे।
- विभाग, सम, ताली और खाली का अर्थ समझ सकेंगे।
- तीन ताल मे नोटेशन लिखने मे समर्थ हो सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल , ताल मे किसी भी नोटेशन को लिखना विषय के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत

के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

9.3 ताल परिचय

ताल शब्द की उत्पत्ति के विषय में कई मत प्रचलित है। 'संगीतार्णव' नामक संस्कृत ग्रंथ के अनुसार ताण्डव (पुरुष) नृत्य से 'ता' तथा लास्य (स्त्री) नृत्य से 'ल' वर्षों के संयोग से 'ताल' शब्द बना है। 'संगीत दर्पण' नामक ग्रंथ में ताल शब्द 'ताकार' (शिव) तथा 'लकार' (शक्ति) के योग से बना है। 'ताल' शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में ऐसे कई लक्षण ग्रंथों में मिलते हैं। परन्तु सभी ग्रंथों में एक ही भाव है। शब्दों (ता, तक, धिं आदि) द्वारा काल या समय की गति को छंद या पदों में विभाजित करने के जो प्रयोग हुए हैं उन्हें ही ताल कहा जाता है। भरत मुनि के अनुसार संगीत में काल नापने के साधन को ताल कहते हैं। जिस प्रकार भाषा में व्याकरण की जरूरत रहती है, उसी प्रकार संगीत का मुख्य पहलू ताल है। 'संगीत रत्नाकर' के अनुसार, ताल वह है जिसमें नृत्य, ग वाद्य तथा गीत प्रतिष्ठित रहते हैं। प्रतिष्ठा का अर्थ है- व्यवस्थित करना, स्थिरता प्रदान करना।

भारतीय संगीत में ताल-परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही हैं। ताल लय को दर्शाने की क्रिया है। संगीत में विभिन्न स्वरों के बीच जो अंतराल होता है, उसको नापने के लिए ताल की क्रिया आरम्भ होती है। लय एक नैसर्गिक क्रिया है। लय का विस्तार समस्त सृष्टि में पाया जाता है। गति ही लय का प्रमुख लक्षण है। लय के जन्म के साथ ही उसको दर्शाने के लिए किसी क्रिया की आवश्यकता महसूस हुई और 'ताल' का जन्म हुआ। लय को काल तथा क्रिया से नियंत्रित करने पर ताल का उद्भव होता है। लय अपने आप में एक अखंडित तथा व्यापक क्रिया है। इसी को वांछित अंतराल में बांधकर क्रिया से दर्शाना 'ताल' है।

संगीत मे ताल की आवश्यकता

बिना ताल के संगीत अधूरा है। ताल के बिना केवल - स्वरों का आनंद हृदय में उल्लास का सृजन करने में असमर्थ रहता है। अनिबद्ध (ताल विहीन) संगीत ही यदि मानव सुनता रहे तो हृदय में उदासीनता आने लगती है। दूसरी तरफ जैसे ही ताल, शब्द तथा स्वरों का समन्वय होता है, हृदय में उल्लास आ जाता है। संगीत में छंद तथा ताल ही वास्तव में

स्वरों को गति प्रदान करते हैं। ताल संगीत को एक निश्चित नियम या समय के बंधन में बांधता है। ताल ही संगीत में विभिन्न सौन्दर्यपूर्ण चलन-शैलियों का विकास करता है।

ताल संगीत को अनुशासित कर उसके सुगठित रूप तथा चमत्कारिकता से श्रोताओं को आत्म विभोर करता है। त यह ताल ही है जिसके द्वारा प्राचीन तथा वर्तमान संगीत को व स्वर तथा बोल लिपि द्वारा भविष्य के लिए सुरक्षित रखना संभव हुआ है।

तालों में गतिभेद (विलम्बित, द्रुत) के द्वारा रस-निष्पत्ति संभव है। करूण, श्रृंगार आदि रसों के लिए ताल की विभिन्न गतियों का बड़ा महत्व है

तालों में गतिभेद (विलम्बित, द्रुत) के द्वारा रस-निष्पत्ति संभव है। करूण, श्रृंगार आदि रसों के लिए ताल की विभिन्न गतियों का बड़ा महत्व है तालों में गतिभेद (विलम्बित, द्रुत) के द्वारा रस-निष्पत्ति संभव है। करूण, श्रृंगार आदि रसों के लिए ताल की विभिन्न गतियों का बड़ा महत्व है तालों में गतिभेद (विलम्बित, द्रुत) के द्वारा रस-निष्पत्ति संभव है। करूण, श्रृंगार आदि रसों के लिए ताल की विभिन्न गतियों का बड़ा महत्व है तालों में गतिभेद (विलम्बित, द्रुत) के द्वारा रस-निष्पत्ति संभव है। करूण, श्रृंगार आदि रसों के लिए ताल की विभिन्न गतियों का बड़ा महत्व है।

नीचे तीन ताल और उसमें रचित एक रचना का उदाहरण देकर समझाया गया है-

ताल नाम- तीन ताल

मात्राएं- सोलह मात्राएं

वाद्य यंत्र- तबला वाद्य यंत्र का ताल

खाली- एक खाली (नौवीं मात्रा पर)

विभाग- चार-चार मात्राओं के चार मात्रा विभाग

ताली- पहली मात्रा पर सम तथा पाँचवीं और तेरहवीं मात्राओं पर क्रमशः पहली और दूसरी ताली

खास विशेषता- इस ताल का प्रयोग भारतीय शास्त्रीय संगीत मे ख्याल गायन/वादन विधा के साथ बहुतायत किया जाता है। इस ताल को सभी तालों का राजा भी कहा जाता है।

तीन ताल ठाह लय (एकगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा
चिन्ह	x				2				0				3			

तीन ताल (दुगुण)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	34
35	36	37	38	39	40	41	42	43	44	45	46	47	48	49	50	51

तीन ताल (तिगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धाधिं धिं	धाधा धिं	धिंधा धा	तिंतिं ता	ताधिं धिं	धाधा धिं	धिंधा धा	धिंधिं धा	धातिं तिं	ताता धिं	धिंधा धा	धिंधिं धा	धाधिं धिं	धाधा तिं	तिंता ता	धिंधि धा
चिन्ह	x				2				0				3			

तीन ताल (चौगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा
चिन्ह	x				2				0				3			

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

9.1 तीन ताल मे कितनी मात्राएं होती हैं?

1) 16

2) 14

3) 10

4) 12

9.2 तीन ताल मे कितने मात्रा विभाग होते हैं?

1) 5

2) 4

3) 6

4) 12

9.3 तीन ताल मे कौन सी मात्रा पर सम है ?

1) 5

2) 8

3) 1

4) 12

9.4 तीन ताल मे सम को मिलाकर कितनी ताली होती हैं?

1) 5

2) 3

3) 5

4) 12

9.5 तीन ताल मे कितनी खाली होती हैं?

1) 5

2) 1

3) 5

4) 2

9.4 तीन ताल मे रचित राग भिन्न षड़ज मे रचना

किसी भी ताल मे रचना लिखते समय ताली खाली और सं का ध्यान रखना पड़ता है। सं का चिन्ह x है और ताली का चिन्ह गिनती के अक्षर है जी 2,3 4 और खाली का चिन्ह 0 होता है। अगर ताल की एक मात्रा के नीचे जीतने भी स्वर लिखें है तो वो स्वर एक ही मात्रा मे बोलए या गाए जाएंगे। नीचे दिए उदाहरण से इसे आसानी से समझा जा सकता है-

राग भिन्न षड़ज की तीन ताल मे बद्ध रचना-

स्थायी

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
X				2				0				3			
स्थायी															
						गग	मम	गऽ	गसा	ऽसा	निऽ	सा	म	ऽग	सा
						दिर	दिर	दाऽ	रदा	ऽदा	दाऽ	दा	रा	ऽर	दा
ध	ऽ	ऽ	नि	सा	ऽ										
दा	ऽ	ऽ	रा	दा	ऽ										
						ग	म	ध	निनि	सा	ग	म	धध	नि	सां
						दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
गम	धनि	सांनि	धम	गम	गसा										
दिर	दिर	दिर	दिर	दिर	दिर										
अंतरा															
						नि	ध	म	मम	ग	म	मम	ध	ऽ	नि
						दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	ऽ	रा
सां	ऽ	नि	गं	सां	ऽ										
दा	ऽ	दा	रा	दा	ऽ										
						ध	नि	सां	गंगं	म	ग	ऽ	सां	नि	सां

						दा	रा	दा	दिर	दा	रा	ऽ	दा	दा	रा
ध	ऽ	नि	ध	म	ऽ										
दा	ऽ	दा	रा	दा	ऽ										

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

9.6) अगर एक मात्रा के नीचे 3 स्वर लिखें हैं तो उन्हें कितनी मात्राओं मे गाया या बजाया जाता है?

1) 4

2) 1

3) 3

4) कोई नहीं

9.7) अगर एक मात्रा के नीचे 4 स्वर लिखें हैं तो उन्हें कितनी मात्राओं मे गाया या बजाया जाता है?

1) 4

2) 1

3) 3

4) कोई नहीं

9.5 सारांश

ताल मे रचना लिखना भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ताल के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे ताल अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है। ताल मे पकड़ के साथ किसी भी मात्रा से तान या बंदिश उठाकर सम पर विचित्रता पैदा करते हुए आया जाता है।

9.6 शब्दावली

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत के समान गति को लय कहते हैं, संगीत में लय अत्यंत महत्पूर्ण हैं, लय के बिना संगीत की कल्पना भी करना असंभव हैं।
- मात्रा (Matra): ताल की इकाई को मात्रा कहते हैं।
- ताली (Taali): सम के अलावा अन्य विभागों की पहली मात्रा पर जहाँ हथेली पर दुसरे हाथ की हथेली के आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न की जाती है, उसे ताली कहते हैं।
- खाली (Khali): ताल देते समय जहाँ विभाग की प्रथम मात्र पर ध्वनि न करके केवल हाथ हिलाकर इशारा कर देते हैं, उसे 'खाली' कहते हैं. अधिकतर खाली ताल के बीच की मात्र अथवा उसके आस पास हीं कहीं पड़ती है।
- विभाग (Vibhag): ताल को कुछ निश्चित मात्राओं में बांटना जिससे भरे एवं खाली जगहों का पता लगे उसे विभाग कहते हैं

9.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.1 उत्तर: 1

9.2 उत्तर: 2

9.3 उत्तर: 3

9.4 उत्तर: 2

9.5 उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

9.6) उत्तर: 2

9.7) उत्तर: 2

9.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2002). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

9.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

9.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. ताल का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

प्रश्न 2. तीन ताल का परिचय और एकगुण लिखिए।

प्रश्न 3. तीन ताल का परिचय और एकगुण मे अपनी स्वेच्छा से कोई भी नोटेशन लिखिए।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न- कार्यभार

प्रश्न 1. गत, तराना, मेलोडी और हार्मनी का अर्थ विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 2. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर और पंडित जयदेव का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

प्रश्न 3. खटका मुर्की, सूत घसीट, कण और कृंतन विषय को विस्तार से लिखिए।

प्रश्न 4. मारू विहाग, मालकौंस और वृंदवानी सारंग रागों के संक्षिप्त परिचय लिखें।

प्रश्न 5. ख्याल और ध्रुपद का अर्थ परिभाषा एवं ध्रुपद की वाणियों को विस्तार सहित लिखें।

प्रश्न 6. शास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत विषय पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 7. नाट्यशास्त्र, बृहदेशी और संगीत रत्नाकर ग्रंथों का वर्णन अपने शब्दों मे करें।

प्रश्न 8. भातखंडे और विष्णुदिगंबर स्वर प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन कर विस्तार से प्रकाश डालें।

प्रश्न 9. तीन ताल का परिचय और एकगुण मे अपनी स्वेच्छा से कोई भी नोटेशन लिखिए।